अथवा

कामिनीकल्पद्रुम ।

बा० बंसीलालसिंह द्वारा लिखित

बा० श्यामसुन्दरदास बी० ए० द्वारा सम्पादित ।

बालविनोद।

अर्थात्

स्वर्गवासी बा० बंसीलाल सिंह लिखित
कामिनीकल्पद्रुम के एक खंड का
संशोधित संस्करण

जिसे

श्यामसुन्दर दास बी० ए०

ने

सम्पादित किया

और

माधवप्रसाद स्वामी, "पुस्तक कार्य्यालय" नें
प्रकाशित किया

तथा जिसको
मैनेजर, धर्मदत्त वेदशास्त्री ने काशी केशव प्रेस में
छापा।

सन् १९१३ ई०

तीसरा संस्करण २०००]   [मूल्य ।=)

भूमिका ।

लखनऊनिवासी बाबू बंसीलाल सिंह ने अनेक वर्ष हुए कामिनी-कल्पद्रुम नाम की पुस्तक लिखी थी । इसको उन्होंने तीन भागों में बांटा था जिसका विवरण वे अपनी भूमिका में इस प्रकार लिखते हैं

'इस ग्रंथ में इतिहास या किस्स कहानो नहीं लिखे, किन्तु स्वदेशीय सज्जन स्त्रियों के हितार्थ उनके धर्म कर्म और स्वास्थ्य इत्यादि के उपाय, जिनसे वे विद्या का प्रचार न रखने के कारण अज्ञान हो रही हैं, वेद, पुराण, धर्म शास्त्र, नीति और वैद्यक शास्त्र के अनेक प्रामाणिक ग्रंथों से संग्रह किये गये हैं। इसके तीन भाग हैं। प्रथम में कुमारी धर्म अर्थात् बिन विवाही लड़कियों का आचरण शुद्ध बनाने की नीति और घर के काम धंधे करने, सोना परोना सीखने और पढ़ने ,लिखने की रीति दर्शाई है और ठौर ठौर नीति के ऐसे दोहे चौपाई इत्यादि चुन चुन के लिख दिये हैं जो वे अच्छी तरह समझ लें और सुगमता से कंठ कर सकें। दूसरे भाग में विवाहिता स्त्रियों का धर्म वर्णन किया है और उनको विवाह समय की प्रतिज्ञा और परस्पर प्रेम और प्रीति के आनन्द को समझा कर बतलाया है कि आचार और विचार अपने कैसे सँभारें पति की सेवा किस प्रकार से करें, बड़ों की प्रतिष्ठा और छोटों का मान क्योंकर रक्खें, गृहस्थी किस तरह चलावें, अपना स्वास्थ्य और मर्यादा क्योंकर बनावें और गर्भाधान संस्कार से लेकर बच्चों की उत्पति तक के यत्न, उनके पालन, पोषण और शिक्षा की रीति, बालविवाह की कुरीति और खोटी रस्मों की बुराई सब प्रमाण सहित दिखा के मूल संस्कृत श्लोक भी अर्थ समेत लिख दिये

है। तीसरे भाग में विधवा धर्म और दान पुण्य का विधान है॥"

पहिला और तीसरा भाग बहुत संक्षेप में लिखा गया है। दूसरा भाग कुछ विस्तार से लिखा गया है। इस लिये यह अलग करके "बालाविनोद" के नाम से प्रकाशित किया जाता है। विचार है कि पहिला और तीसरा भाग बढ़ाकर अलग अलग प्रकाशित किया जाय। देखना चाहिये यह विचार कार्य में कब परिणत होता है।

आज कल स्त्री शिक्षा का बहुत कुछ प्रचार हो रहा है और स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तकों की मांग दिनों दिन बढ़ती जा रही है। यह पुस्तक इस आशा से प्रकाशित की जाती है कि यह इस कार्य में कुछ सहायता पहुंचा सके। यदि इसकी उत्तम शिक्षाओं का कुछ फल निकला तो सम्पादक और प्रकाशक अपना अपना श्रम सफल समझेंगे—

काशी
१-६-१३

श्यामसुन्दरदास

विषय सूची ।

बाला विनोद

अर्थात्

विवाहिता स्त्रियों का धर्म।

इस धर्म की रीति वर्णन करने से पहिले यह आवश्यक है कि विवाह समय जो मंत्र पढ़े जाते और जिनके द्वारा स्त्री और पुरुष आपस में संयुक्त होने की प्रतिज्ञा करते हैं उनका अर्थ जो विरली ही स्त्रियां समझती होंगी बतलाया जावे, परन्तु सबके लिखने में तो बड़ा विस्तार हो जायगा इस लिये उन में से दो एक यहां लिख दिये जाते हैं जिनसे उनको अपने वचनों का स्मरण और यह भी ज्ञात हो जायगा कि ऐसा ही कुछ आशय और सब मंत्रों का भी है।

एक तो जब यज्ञ करने बैठते हैं स्त्री और पुरुष दोनों यह मंत्र पढ़ते हैं—

ओं समंजन्तु विश्वेदेवःसमापो हृदयानिनौ।
संमातारिश्वा संधाता समुदेष्ट्री दधातुनौ॥

अर्थ—हे विश्वदेवा आप निश्चय करके जानें कि हम दोनों गृहाश्रम में एकत्र रहने के निमित्त एक दूसरे को स्वीकार करते हैं, हमारे हृदय जल के समान शांत और मिले हुये रहेंगे, प्राण के तुल्य हम दोनों एक दूसरे को प्रिय समझेंगे, जैसे परमात्मा सबसे मिला हुआ जगत को धारण करता है वैसेही हम दोनों एक दूसरे को धारण करेंगे, जैसे उपदेशक श्रोताओं से प्रीति करता है

वैसेही हमारी आत्मा एक दूसरे के साथ दृढ़ प्रेम रक्खेगी।

फिर जब ध्रुव तारा दिखाया जाता है तब स्त्री यह कहती है

ओं ध्रुवमसि ध्रुवोहं पतिकुले भूयासम्

अर्थ—जिस तरह यह ध्रुव स्थिर है वैसेही मैं पति के कुल में दृढ़ स्थिर रहूंगी।

और आज्याहुति देने के समय दोनों इस मंत्र का उच्चारण करते है—

ओं अन्नपाशेन मणिना प्राण सूत्रेण पृश्निना।
वन्धामि सत्यग्रन्थिना मनश्च हृदयं च ते॥

अर्थ—जैसे अन्न के साथ प्राण और प्राण के साथ अन्न का संबंध है वैसेही हम दोनों एक दूसरे के हृदय और चित्त को सत्यता की गांठ से बांधते हैं॥

ओं यदेतद् हृदयं तव तदस्तु हृदयं मम।
यदेतद् हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव॥

अर्थ—यह जो हृदय तेरा है वह मुझको अपने हृदय के तुल्य प्यारा रहेगा और जो यह मेरा हृदय है तुझे अपने हृदय सा सदा प्रिय रहे।

इन वचनों के सिवा स्त्री अग्नि को साक्षी देती और कहती है—

भर्त्तासहचरी भूयात् जीवताऽजीवतापि वा॥

अर्थ—जब तक जीती रहूंगी हरदम दासी के समान सेवा करूंगी।

भर्ता देवो गुरुर्भर्त्ता धर्म्मतीर्थव्रतानि च।
तस्मात्सर्वं परित्यज पतिमेकं समर्पयेत्॥

भर्त्ता ही को देवता और भार्त्ता ही को गुरू समझूंगी, तीर्थ व्रत सब छोड़ के केवल उसी की पूजन और उपासना में लगी रहूंगी॥

इन प्रतिज्ञाओं को समझकर हर एक स्त्री पुरुष का धर्म है कि

पति पत्नी आपस में एक दूसरे को प्राणही के तुल्य समझें, रात दिन एक दूसरे के हित और सुख की चिन्ता में रहें और दिनों दिन स्नेह और प्रीति को बढ़ाते जांय, इसी में उनका कल्याण और इसी से विवाह का सुख उनको प्राप्त होगा। मनुस्मृति का वाक्य है (अ: ३ श. ६०.)

संतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैवच।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वैध्रुवम् ॥

अर्थ—जिस कुल में निरंतर भर्ता तो निज भर्या से और भार्या भर्ता से प्रसन्न रहती है, वहां आनन्द, लक्ष्मी और सौभाग्य का सदा निवास रहता है ॥

ऐसाही मिताक्षरा धर्मशास्त्र आचार-अध्याय श्लोक ७८ में भी लिखा है

यत्रानुकूलदंपत्यो स्त्रिवर्गस्तत्र वर्धते ॥

अर्थ-तीनों वर्ग अर्थात् धर्म अर्थ और काम का ऐश्वर्य उसी घर में बढता है जहां स्त्री और पुरुष प्रीति भाव से वर्तते हैं ॥

इन प्रमाणों को छोड़ के नित्य देखने में भी आरहा है कि जिन स्त्री पुरुषों में स्नेह और मेल मिलाप है वे कैसे सुख में रहते और दिन दिन उनके घर की शोभा कैसी बढ़ती जाती है पर जहां हित के बदले बैर और सम्मति की जगह कलह प्रधान : है उनके यहां सदा दुखही दुख दिखाई देता है। यह बिगाड़ बहुधा स्त्रियों के ही दोष से पैदा हो जाता है कि वह पढ़ी लिखी न होने से न अपना धर्म जानती हैं न आचार, और कोई बुद्धि की भ्रष्ट, वाणी की फूहड़, और स्वभाव की भी ऐसी भोड़ी होती हैं कि बात में टेढ़ी और जब देखो तब रूठी रहती हैं, पति दिन भर का मारा खपा घर में आया, आप लम्बी ताने पड़ी रहतीं, बात नहीं पूछतीं और बोलतीं भी तो फाड़ खातीं, और बहुतेरी ऐसेही कौतुक

करती हैं जिन से पति का जी फट जाता और अंत को वह अपना मन कहीं और बहलाता है, स्त्री आप बैठी कोस्ती कलपती और जन्म भर रोती हैं ॥

पतिव्रता के लक्षण ।

इस लिये जो स्त्रियां अपना सुख और भला चाहती हों उनको उचित है कि प्रथम अपनी चलन सवारें और पतिव्रता के लक्षण धारण करें। शास्त्र में यह लिखा है

नोच्चैर्वदेन्न पुरुषं न बहून् पत्पुर प्रियान् ।
न केनापि विवदेद् प्रलाप विलापिनी ॥
प्रमादोन्मादरोषेर्ष्यां वञ्चञ्चाभिमानिता ।
पैशून्य हिंसाविद्वेष मोहहंकार धूर्त्तता ॥
नास्तिक्यसाहसस्तेय दम्भान् साध्वी विवर्ज्जयेत् ॥

अर्थ—चिल्ला के न बोले, कड़वी और अप्रिय बात भी पति को कभी न कहे, किसी से लड़ाई झगड़ा न करे, व्यर्थ न बके, न रोये धोये, प्रमाद, उन्माद, क्रोध, ईर्षा, कपट, अभिमान, चुगली, हिंसा, द्वेष, मोह, अहंकार, धूर्त्तता, नास्तिक्य, दुःसाहस, चोरी, छल जो ये १६ महा दोष हैं इनके पास न फटके ॥

जिस स्त्री में इस तरह का एक दोष भी होता है वह सदा दुख उठाती और नष्ट होजाती है। जो कोई कहे कि ऊँचा बोलने या क्रोध में कोई कड़ी बात भी कह उठने में क्या बुराई होसकती है, जहां चार बासन रहते हैं खटकते ही हैं, तो बिगाड़ इसमें यह होता है, कि जो बासन आपस में टकराते रहते हैं वे एक दिन जल्दी फूट भी जाते हैं ये बातें कलह की जड़ हैं और कठोर बोलना तो इतना बड़ा कुलक्षण हैं कि मनुस्मृति में ऐसे स्वभाव वाली स्त्री के साथ विवाह करना मना किया है, स्कंदपुराण में लिखा है

उक्ता प्रत्युत्तरं दद्यात् या नारी क्रोध तत्परा ।
साश्नुनी जायते ग्रामे शृगालो निर्जने वने ॥

अर्थ— जो स्त्री पति की बात का जला कटा जवाब देती, है वह दूसरे जन्म में गांव की कुतिया और जो क्रोध करती है, वन की सियारनी होती है ॥

किसी किसी स्त्री की यह टेव भी पड़जाती है कि यों तो कुछ नहीं बोलती पर जब बाहर की कोई स्त्री बैठी होती है तो यह जताने को कि वह अपनी ही बात बाला रखती है अदबदा के स्वामी की बात कोटती, मचलती, ताने मेहने देती, नाक भौं चढ़ातीं और अनेक प्रकार से निरादर व अपमान करती है। इस पर जो कहीं वह भी कूढ़ा हुआ हुआ तो उसी दम चख होने लगती है और जो समझदार और गमखोर हुआ तो हँस के टाल जाता है पर यों ही बढ़ते बढ़ते मन में गांठ पड़ जाती और अंत को स्त्री जी से उतर जाती है ॥

स्त्री को चाहिये कि शील स्वभाव रक्खे, सदा नम्रता के साथ और हँस के मीठा बोले हित व स्नेह की बातें करे और अपने स्वामी के मन को हाथ में लिये रहे। कहा है सुख जबही प्राप्त होता है जब

प्रिया च भार्य्या प्रियवादिनी च ॥

अर्थात् भार्य्या हँस मुख और मधुर बोलने वाली मिलती है, और लिखा है कि

या हृष्टमनसा नित्यं स्थानमोनविचक्षणा ।
भर्तुः प्रीतिकरी नित्यं सा भार्य्या हितकारिणी ॥

अर्थ-जो स्त्री सर्वदा प्रसन्न रहती, हर्ष के साथ अपने पति की मर्यादा रखती, मान उसका बढ़ाती और अंतःकरण से प्रीति करती है वही यथार्थ भार्य्या है, अन्य सब जरा स्वरूपी अर्था व्यर्थ हैं ॥

पतिव्रता धर्म ॥

और पतिव्रता के धर्म भी येही वर्णन किये हैं

मनो वा कर्म्मभिश्शुद्धाः पतिदेशानुवर्तिनी
छायेवानुगता स्वच्छा सखीव हितकर्म्मसु ॥

अर्थ-मन की निर्मल, वाणी की प्रिय, बात की सच्ची और आचार की शुद्ध होये, पति की आज्ञा में चले, छाया की तरह उसके साथ रहे और सखी की नाईं उसके हितका साधन करे ॥

मनुस्मृति का वाक्य है

विशीलः कामवृत्तोवा गुणैर्वा परिवर्जितः।
उपचर्य्यः स्त्रिया साध्व्या सततन्देववत्पतिः ॥

अर्थ-शील से रहित पति हो किम्बा गुणों से वर्जित अथवा दूसरी स्त्री से प्रेम रखता हो तौ भी पतिव्रता को यही उचित है कि देवता ही के समान उसको समझे ॥

स्त्रीभिर्भर्तृवचः कार्यमेष धर्मः पर स्त्रियाः
आशुद्धेः संप्रतीक्ष्योहि महापातकदूषितः ॥

अर्थ-भर्ता का कहना मानना स्त्री अपना परम धर्म जाने, जो वह दोषों से भरा हो तौ भी उसी के अधीन रहे।

गुसांईं तुलसी दास जी ने भी कहा है कि

अमित दान भर्ता वैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही ॥
वृद्ध रोग बश जड़ धन हीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना ॥
ऐसेहु पति को किय अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना ॥

इन नीतियों पर जो कोई स्त्री यह तर्क कर बैठे कि शास्त्र वालों ने तो पूरी लौंड़ी बनाया और महा अन्याय दिखाया है, पुरुष अच्छा न हो तो क्यों स्त्री उसके पीछे फिरे, तो यह तर्क करने वालों की ना समझी है। शास्त्र ने उसको लौंड़ी नहीं बनाया, पुरुष को गुलाम बना रखने का उपाय बताया है, क्योंकि शुद्ध आचार और भक्ति से

तो परमेश्वर वस होजाता है। मनुष्य का वश होजाना क्या वड़ी वात है जब स्त्री यों तन मन से प्रीति करेगी तो वह भी अवश्य ही उसका हो रहेगा, दूसरे यह भी स्त्री का लाभ है कि ऐसे वर्तात्र से प्रीति में रुक्षता पड़ने नहीं पाती और सुहाग उसका बना रहता है, नहीं तो पति की रुचि हटी और शोभा इसकी मिटी, तीसरा गुण यह है, कि न पुरुष कहीं अटकता और न स्त्री का मन विचलता है, चौथे पति के व्यभिचार में पड़ने से जो धन बाहर जाता वह वच रहता है जो उसके और उसी की औलाद के काम आता है और सब से बड़ा पांचवा लाभ यह है कि ऐसे आचार से स्त्री का परलोक भी सुधरता है। देखो मिताक्षरा श्. ८७

पतिप्रियहिते युक्ता स्वाचारा विजितेन्द्रिया ।
सेह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्यचानुत्तमां गतिम् ॥

अर्थ—जो स्त्री पति से प्रीति करती उसके हित में लगी रहती और अच्छे आचार और इंद्रियों को वश में रखती है वह संसार में सुकीर्ति और परलोक में उत्तम गति पाती है ॥

मनुस्मृति. अ.५. श १६५ ॥

पतिं यानाभिचरति मनो वाग्देह संयता ।
सा भर्तृलोकमाप्नोति सद्भिःसाध्वीतिचोच्यते ॥

अर्थ—जो स्त्री पति का अपमान नहीं करती तन मन से भक्ति में लगी रहती है वही पतिव्रता कहलाती और अंत होने पर पतिलोक पाती है ॥

और ऐसी स्त्री की उपमा लक्ष्मी से दी है जैसा यह श्लोक है

अनुकूला न वाग्दुष्टा दक्षा सध्वी पतिव्रता ।
एभिरेव गुणैर्युक्ता श्रीरेव स्त्री न संशयः ॥

अर्थ—जिस स्त्री में ये गुण होते हैं कि अपने पति की आज्ञा-

नुसार चलती, कभी कड़वी बात नहीं कहती, घर के कामों को अच्छी तरह देखती, सदाचारी और पतिव्रता होती है, वह साक्षात लक्ष्मी स्वरूप है।

ऐसाही भविष्य पुराण में कहा है कि हँसमुख, आज्ञानुसारिणी और हितकारिणी भार्या देवी समान है, परमेश्वर उस पर सदा अनुकूल रहता और प्रार्थना उसकी सर्वदा पूर्ण करता है

॥ पतिसेवा ॥

पति की सेवा तीन प्रकार की लिखी है मानसिक, वाचिक और और कायिक। प्रेम करना मानसिक सेवा है, नम्रता और स्नेह के साथ मीठा बोलना वाचिक, और शारीरिक सुख देना, किसी प्रकार का खेद न पहुंचाना, कायिक सेवा है। सज्जन स्त्रियों को चाहिये कि इन तीनों प्रकार की सेवा में सर्व काल तत्पर बनी रहें अर्थात् आठों पहर उसके हित की सोचें, प्रेम में चूर व मग्न रहें और जी से उसको प्रसन्न रक्खें, सदा प्रीति विनती के साथ मधुर बोलें, कड़ी बात मुंह से न निकालें, क्रोध में देखें तो चुप हो रहें, जब शांत पावें बड़ी नम्रता से जो पूछना हो पूछें, कभी बात न काटें, जबान न लड़ायें, झूठ न कहें, बकवाद न मचायें, उसके सुख की जितनी सामग्री हो सबको एकत्र रक्खें, उसके सोने के पीछे सोवें, उठने से पहिले उठें, जो जो पदार्थ जिस जिस समय के लिये चाहिये पहिले से एकट्ठे करदें, रुचि का भोजन बनायें, ठीक समय पर अत्यंत प्रीति और आदर के साथ जिमावें, शयन के समय विनोद से उसके चित को प्रफुल्लित करें, किसी बात में हठ न करें, न किसी वस्तु के वास्ते समाये, उसको कोई दुख हो तो आप भी दुख मानें, कोई आपदा आजाय तो आप धीर रहें और उसको ढाढस बँधावें, क्लेश में क्लेश न बढ़ायें, सलाह से सब काम करें, बिना आज्ञा कहीं घर से

याहर न जाय, न पर पुरुष पर आंख उठायें, खिड़की झरोखे कभी न झांकें कि इस से सती धर्म में बाधा आती है उत्तम मध्य निकृष्ट और लघु जो चार प्रकार की पतिव्रता और उनके लक्षण अनसूया जी ने महारानी सीता जी से बताये थे ये हैं

उत्तम के अस बस मन माहीं ।
सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं ॥
मध्यम परपति देखहिं ऐसे ।
भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ॥
धर्म विचार समुझि कुल रहहीं ।
सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहहीं ॥
बिन अवसर भयते रह जोई ।
जानेहु अधम नारी जग सोई ॥

इन में निकृष्ट अधम तो दूषित ही हैं, मध्यम भी न बने केवल उत्तम के आचार धारण करे और सिवा अपने पुरुष के दूसरे की छांह भी न देखें ॥

नियम और धर्म ॥

पतिव्रता के वास्ते तन मन से पति की सेवा में लगी रहना यही एक नियम और अति स्नेह और प्रीति से उसकी भक्ति करना यही एक महा धर्म शास्त्र ने निर्णय किया है, इस से विपरीत जो नेम धर्म आज कल्ह स्त्रियां बघारती हैं वह सब अनर्थ है। उनको इतना तो ज्ञान ही नहीं कि नियम कहते किसको हैं और धर्म किसका नाम है, हां इसको बड़ा विचार है कि छरछोथी जाने में देह पर वस्त्र न हों बिना नहाये कोई वस्तु न छूजाय, रसोई में ऊनी या धोई फीची धोती रहे, चौका कहीं पति भी छू दे तो भ्रष्ट होजाय—बस इसी छुआछूत को नेम समझती हैं और गंगा यमुना नहाना, आधी आधी

रात में कार्तिक स्नान को जाना, दो दो पहर यात्रा और कथा में गँवाना, पीपल वगैर्द और आंवले की फेरी लेना, कंठी बांधनां, घंटा हिलाना, गर्भिणी और बच्चे वली होकर भी व्रत उपवास करना, सूप चलनी पूजना और मीयां पीर मनाना-धर्म जानती हैं, इसकी खबर नहीं कि इन कर्मों से सतीपन भंग होता, पत उतरती, धन जाता और धर्म में बट्टा लगता है, कारण इसको आगे खुल जायगा, यहां पहले नियम और धर्म के अर्थ सुन लिजिये।

नियम शब्द के अर्थ हैं बुरे विचारों को रोकना, मन को बहकने न देनां, अच्छी प्रकृत रखना, दुष्ट कर्मो को छोड़ना, और अपने प्रण पर स्थिर रहना। धर्म सदाचार को कहते हैं अर्थात् अच्छे चलन चलना, भला बुरा विचारना, भलाई करना, बुराई के पास न जाना, और मर्यादा से रहना।

अब सोचिये कि स्त्री को बुरे कामों से हटकर पति के चरणों में स्थिर रहने और "भर्ता सहचरी भूयात् जीवता ऽजीवतापिवा,, वाली प्रतिज्ञा के निर्वाह निमित्त तन मन से सेवा टहल करनेका नियम साधना योग्यता है, या उसका छूवा तक न खाना और पाखण्ड ढकोसले करना॥

इसी तरह यह भी विचारिये कि स्त्री का दो दो पहर बाहर रहना रात को घर से निकलना, भीड़ में जाना, मेलों में फिरना, हज़ारों मर्द के बिच में नहाना और उघारा होना ये सब अच्छे चलन या बुरे, और जब नहाते और धोती बांधते समय लुच्चे घूरते और अंग निहरते, शुहदे आवाज़ें कसते और ठट्ठे लगाते, भीड़ में बदमाश धक्के देते, कुहनी मारते, ठौर कुठौर हाथ चलाते, और चोर उचक्के नाक कान नोचते हैं, तो लाजजाती और पत उतरती है कि नहीं॥

फिर शास्त्र तो निषेध करे कि किसी पर पुरुष की परछांही भी

न पड़ जाय, घर के अंदर भी कोठरी के किवाड़ बंद कर के नहाये, पति भी नग्न न देख पाये, और स्त्री हज़ारों को यों अपना अंग अंग दिखलाये, यह धर्म है या अधर्म, और जिस मर्यादा के वास्ते कहा है कि तन मन धन सब कुछ देकर भी बचे तो बचाना चाहिये, वह यों गंवाई जाय तो यह तरने के लक्षण हैं या डूबने के ॥

इन दोषों को सोच विचार के गंगा महरानी को घर बैठे दंडवत कीजिये, और धन, प्रातिव्रत, और धर्म, जो अमोल पदार्थ हैं भेट न दीजिये और अपने इस प्रण को याद करके कि

भर्ता देवो गुरुर्भर्ता धर्मतीर्थव्रतानि च ।
तस्मात्सर्वं परित्यज पतिमेकं समर्चयेत् ॥

अर्थ—देवी देवता सब कुछ अपने पतिही को समझिये, जो शास्त्र भी कहता है कि " नारि धर्म पति देव न दूजा ,,

और लिखता है कि

(मनुस्मृति अ. २. श६७)

वैवाहिको विधि स्त्रीणां संस्कारो वैदिकःस्मृतः ।
पतिसेवा गुरोर्वासो गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया ॥

अर्थ—स्त्रियों का विधी पूर्व विवाह होना यही वैदिक संस्कार है, पति की सेवा में रहना यही ब्रह्मचर्य, और घर का काम काज करना यही अग्निहोत्र क्रिया उनकी है ॥

म. अ. ५. श १५५.

नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतन्नाप्यु पोषितम् ।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते ॥

अर्थ—यज्ञ व्रत पूजा इत्यादि स्त्रियों के वास्ते पृथक नहीं है, केवल पति की सेवा से उनको स्वर्ग में बड़ाई मिलती है ॥

स्मृतिकार का वाक्य है

जपस्तपस्तीर्थ यात्रा प्रवृज्या मंत्रसाधनं।
देवताराधनं चेति स्त्री शूद्रयोः पतनाय वै॥

अर्थ—जप, तप, तीर्थयात्रा सन्यास, मंत्रसाधन, और देवता का पूजन, ये छओ कर्म स्त्री और शूद्र के नाश कारक हैं॥

वामन पुराण में कहा है

पद्ममाल्यं धारयेन्नित्यं नच तुलसीमालिकं।
यः कोपि च भवेद्भर्त्ता तं देवमिव पूजयेत्॥

स्थिते भर्तरि या नारी उपोष्य व्रतमाचरेत्।
आयुष्यं वाधते भर्त्तुः सा नारी नरकं व्रजेत्॥

अर्थ—स्त्रियों का देवता उनका पति है, उसी को पूजन करें, और उसकी प्रसन्नता के वास्ते कमल आदि पुष्पों की माला पहिरें—तुलसी की माला धारण करना उन्हे निषेध और व्रत उपवास करना महादोष है. क्योंकि उसके प्रभाव से पति की आयु क्षीण होती और इस दोष से स्त्री को नरक प्राप्त होता है॥

मनु का भी प्रमाण है कि

पत्यौ जीवति या स्त्री दुपोष्य व्रतचारिणी।
आयुष्यं हरते भर्त्तुर्नरकं च अधिगच्छति॥

अर्थ—जो स्त्री पति के जीते व्रत रखती या उपवास करती है वह पति की आयु हरती और आप नरक में पड़ती है॥

इस लिये यह सब भ्रमजाल छोड के केवल पति की हो रहिये और निश्चय लाइये कि स्त्री के वास्ते जैसा गुसांई तुलसीदास जीने कहा है कि

एकै धर्म एक व्रत नेमो।
काय वचन मन पति पद प्रेमो॥

यही एक रस्ता कल्याण का है। पतिव्रत का इतना बड़ा प्रभाव है

कि केवल उसके बल से सावित्री ने जिसकी कथा नीचे लिखी जाती है, अपने पति सत्यवान को यम के फंदे से छुड़ाया, अपने ससुर की आंखे अच्छी कराई और उसका छिना हुआ राज पाट सब दिलाया। यह कथा महाभारत के वन पर्व में यों लिखी है

मद्रदेश में अश्वपति नाम का एक राजा था, उसके एक कन्या पैदा हुई जिसका नाम उसने सावित्री रक्खा। यह लड़की बड़ी सुन्दर सुशील और बुद्धिमान निकली। जब यह विद्या पढ़ चुकी और स्यानी हुई, राजा ने इसको आज्ञा दी कि अपने समान रूप रंग बुद्धि और विद्वान वर पसन्द करे। इसने राजा द्युमत्ससेन के पुत्र को पसन्द किया। संयोग से उस समय नारद मुनि विराजमान थे उन्होंने यह सुनकर कहा कि सत्यवान रूप, बल, बुद्धि, विद्या, और वीरता सब में निस्संदेह परिपूर्ण है, परन्तु उसके साथ सम्बन्ध करने में दोष है, एक तो यह कि राजा द्युमत्सेन का राज सब उसके शत्रुओं ने छीन लिया और वह अंधो भी होगया है, अपनी स्त्री और पुत्र सहित वनवास करता है दूसरा दोष यह है कि जिस दिन सत्यवान का विवाह होगा पूरे एक वर्ष पर उसका देहांत होजायगा-राजा अश्वपति को सत्यवान का काल के मुंह में होना सुनके सावित्री का उसके साथ विवाह कर देने में संकोच हुआ, पर सावित्री ने प्रार्थना की कि महाराज जिसको मैं एक वार मन से पति मान चुकी अब उसके सिवा दूसरे का नाम नहीं ले सकती, जो कुछ प्रारब्ध में बदा हो, हर इच्छा। इसकी दृढ़ता देख के राजा ने अंत को विवाह कर दिया, और यह राजसी सुखों को त्याग के सत्यवान के साथ वन में तपस्विनी की तरह रहने और तन मन से उसकी सेवा और सासु ससुर की टहल करने लगी, कभी स्वप्न में भी उन सुखों को जिनके साथ मा बाप के घर में पली थी ध्यान नहीं करती, बड़े आनन्द से घास पर

सोती, कंद मूल खाती, और प्रसन्न रहती थी, सोच और खेद जो कुछ था केवल नारद मुनि के वचन का, और इस वास्ते एक एक दिन गिनती जाती थी। अंत को जब चार दिन साल के बाकी रह गये, इसने सास से त्रिरात्रि व्रत करने की आज्ञा मांगी। उसने कहा तू दुखों से अति दुर्बल होरही है, बिना आहार और भी जीवन कठिन होजायगा। इसने कहा आप कुछ भी चिंता न करें, मैं बड़े हर्ष से तीन दिन काट डालूंगी, और आज्ञा लेके व्रत रही। चौथे दिन सूर्य उदय होतेही सास ससुर ने कहा अब व्रत अंत हुआ पारण करो। वही दिन नारद के वचन के अनुकूल सत्यवान की मृत्यु का था, और दूसरा कोई इस बात को जानता न था, इससे बड़ी नम्रता से उसने कहा कि मैंने व्रत का संकल्प संध्या समय तक का किया है, और अपने मन में यह ठानकर कि जो कुछ हो आज एक क्षण भी पति को एकला न छोड़ूंगी। जब वह फूल फल लेने वन को चला, इसने प्रार्थना को कि आज मुझे भी साथ ले चलिये, और सास ससुर की आज्ञा लेके यह सोचती हुई कि देखिये क्या होता है पति के साथ हो ली। जंगल में पहुंच के अच्छे अच्छे फूल फल बटोर कर, जब सत्यवान जलाने की लकड़ी तोड़ने लगा उसी समय उस के सिर में बड़ा भारी दर्द उठा और वह व्याकुल होके गिर पड़ा। सावित्री ने दौड़ के सिर उसका उठा कर अपनी गोद में रख लिया। इतने में एक बड़ा भयंकर श्याम रंग का स्वरूप पास आ के खड़ा होगया और भयानक आंखों से सत्यवान को घूरने लगा।

सावित्री अपने पति का सिर पृथ्वी पर रख के कांपती हुई हाथ जोड़कर खड़ी होगई और पूछा कि आप कौन हैं और क्या आज्ञा है। उस पुरुष ने कहा कि हे सावित्री तू पतिव्रता है, इससे मैं तुझे बताये देता हूं कि मैं यमराज हूं और तेरे पति का जी हरने आया

हूं और यह कह के सत्यवान का प्राण ले दक्षिण ओर चला और सावित्री से बोला कि अब तू घरजा और प्रेत कर्म कर। सावित्री ने प्रार्थना की कि महाराज

जहं भर्त्ता मम जायगो मोहिं गमन तहं पर्म।
धर्मराज पतिव्रतन को यहै सनातन धर्म॥
तप व्रत ते गुरु भक्ति ते पातिव्रत है पर्म।
पति हत गति मम होति नहिं तव प्रसाद ते धर्म॥
मैत्री नियमित सप्तपद कहत सकल मतिमान।
आगे करि सो मित्रता कहति सो सुनहु सुजान॥
आत्मज्ञानी धर्मरत बुध वनवासी जौन।
भापत धर्म प्रधान करि साधु सनातन तौन॥
सत मत एक सुधर्म ते सत पथ मिलत सुपर्म।
करत न वांच्छित और पथ साधु छोड़ि के धर्म॥

यमराज इस दृढ़ प्रेम को देख अति प्रसन्न हुये और बोले कि सिवा सत्यवान के जीव के और जो चाहती हो मांग। इस ने कहा मेरे ससुर की आंखें अच्छी हो जांय और राज भी मिलजाय। यमराज बोले कि जो तूने मांगा दिया अब कष्ट न उठा; घर जा, वह बोली

पति समीप नहिं होत श्रम गति मम जहँ भर्त्तार।
जहँ मम पति को राखिहो तहं मम सुगति अवार॥
सत संगति यक बार लहि पावत मत्री पर्म।
अफल होत सत संग नहिं सुनियत राजा धर्म॥

यमराज बोले और जो मांगना हो मांगले। इसने कहा मेरा कोई भाई नहीं है, मेरे पिता के सौ पुत्र दीजिये, यमराज ने वह भी दिया और कहा।

यह वर लें फिरिजाहु तुम है पन्थ अति भूरि।

सावित्री बोली—

पति ढिग पथ सब निकट मम मनधावत अतिदूर ॥
जगदात्मा रवि के तनय भरे प्रताप महान ।
तव सधर्म शासन लहे विचरत प्रजा समान ॥
फल अलभ्य प्राणीं लहत सत संगम सो सर्व ।
याते सत संगति करत जन पद लाभ अखर्व ॥
सौहृदते सब भूप को होत महत विश्वास ।
याते करत विश्वास वश तेजन महिं मतिरास ॥

यमराज और भी प्रसन्न हुये और कहा और जो मांग, दूं-तव इसने मांगा कि मुझे सत्यवान् से सौ पुत्र पैदा हों—यमराज ने कहा जा

पुत्र होहिंगे एक शत भरे महा वलवीर ।
सावित्री औरस तुम्हें ह्वै है श्रम न गंभीर ॥

सावित्री वोली महात्माओं का वाक्य वृथा नहीं जाता

सन्त होत सत वृत्ति सव कहत करत सो सिद्ध ।
होत अफल सत संग नहिं भयहर मोदद ऋद्ध ॥
तुमते चाहति पुत्र नहिं क्षेत्रज लहि पति अन्य ।
जीवित को व्यवसाय नहिं मोहिं विन भर्त्ता धन्य ॥
दियो मोहिं शत पुत्र को वर हरि भर्त्ता पर्म ।
सत्यवान जीवै सो वर दीजै सत्य सधर्म ॥

अंत को यमराज ने सत्यवान को जिला दिया और चार सौ वर्ष की आयु दी । यह उसको बड़े आनन्द व मंगल के साथ संग ले घर आई, इनके लौटने में देर होने के कारण सास ससुर जो अति विकल होरहे थे उनको उसने हर्ष पहुंचाया और सब वृत्तांत कह सुनाया और जितने वरदान यमराज से पाये थे अपने अपने समय पर वे भी वह सब पूरे हुये ॥

स्वतंत्रता

स्त्री कभी अपने आपको स्वतंत्र भी न करदे। बूढ़ी भी होजाय तौ भी पति पुत्र के घर बड़े छोटों के कहने में रहे और सब की सलाह में चले

बालया वा युवत्या वा वृद्धया वापि योषिता।
न स्वातंत्र्येण कर्त्तव्यङ्किचित्कार्य्यङ्ग्रहेष्वपि॥
बाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत्पाणिग्राहस्य यौवने।
पुत्राणांभर्त्तरिप्रेते न भजेत् स्त्री स्वतन्त्रताम्॥
पित्रा भर्त्रा सुतैर्वापि नेच्छेद्विरहमात्मनः।
एषांहि विरहेण स्त्री गर्ह्यां कुर्य्यादुभे कुले॥

अर्थ—स्त्री बाला हो चाहे युवा, बूढ़ी हो या किसी तरह की कभी स्वतंत्र न रहे, न कोई काम अपने मन का करे। बालपन में पिता की आज्ञा में रहे, युवावस्था में पति के वश, और विधवा भये पर पुत्रों के अधीन, जो पुत्र न हों, पति के नातेदार, वे भी न हों, तो पिता के संबंधियों की सलाह माने, पिता, भर्त्ता पुत्र इन से कभी अलग न रहे, इनके वियोग से स्त्री दोनों कुल को निन्दित करती है, इस लिये सज्जन स्त्रियों को चाहिये कि इस नीति को अपनी गांठ में बांधें, कि

बालभाव जब तक रहे नारी। तब तक पितु आज्ञा अनुसारी॥
होय स्यानि तब करे पतिसेवा। ताको समझ लेइ निज देवा॥
मन प्रसन्न राखे सब छिन में। आलस नींद ग्रसे नहीं तन में॥
होय गेह काज में दक्षा। करे सदा धन संपति रक्षा॥
सब पदार्थ को रहे थानये। रात दिवस देखे मन भाये॥

गृहस्थ्य धर्म

गृहस्थी का सारा बोझ भी औरतों ही के सिर है, इस लिये

पहिले अच्छी तरह से समझ लो कि यह क्या पदार्थ है।

देखो, मनुष्य की तीन अवस्था है, वालपन, जवानी औरवुढ़ापा इन तीनों के लिये तीन आश्रम अर्थात् तीन अलग अलग काम बना दिये गये हैं, वालअवस्था का काम है विद्योपार्ज्जन और वेद व शास्त्रों का अध्ययन करना और गुणों को सीखना, और इस कर्म का नाम ब्रह्मचर्य है।

विधिपूर्वक विवाह से संयुक्त होकर सृष्टि की उन्नति करना, लोक और परलोक के व्यवहारों में नीति के साथ प्रवृत्त होना, मर्यादा से चलना, अच्छे कर्म और सबकी भलाई और सहायता करते रहना, मान अपमान सब सहना, धन और धर्म को वढ़ाना और परमात्मा का स्मरण रखना ये सब युवा अवस्था के कर्म हैं और इन्हीं का नाम गृहस्थाश्रम है॥

पुत्र पौत्र धन दौलत जब सब मिलजाय तब संतुष्ट होके केवल सच्चिदानन्द से लौ लगाना, माया मोह को त्यागना और शरीर को विनाशमान समझना, यह वुढ़ापे का काम है, और इसी कृति को वानप्रस्थ और सन्यास कहते हैं सो उसका समय अभी बहुत दूर है इस वक्त तो गृहस्थी से काम है, उस के हर पद को खूब विचार लीजिये

देखिये पहले तो यह गृहस्थ शब्द अपने स्वरूप से यह वतला रहा है, कि जैसे वह अकेला नहीं, गृह और स्थ दो पदों से संयुक्त है वैसेही आप भी अपने पुरुष के साथ दृढ़ प्रेम से स्थित रहिये दूसरे जो अर्थ उसमें हैं वही आप भी धारण कीजिये, अर्थात् गृह के अर्थ हैं, घर, पकड़ना, वटोरना, एकट्ठा करना, उठाना, सहना और स्थ के माने स्थिर होना, दृढ़ रहना इन सबको मिला के यह अर्थ हुये कि घर में अपने स्थिर रहो,-स्वामी को दृढ़ प्रीति से

पकड़ो-धर्म और धन बटोर कुटुम्ब को एकत्र रक्खो, आप कष्ट उठावो दूसरे को दुख न दो, अतिथि अभ्यागत सबका आदर सत्कार करो, विपत्ति काल में जैसी पड़े सहो, धर्म धैर्य और संतोष को कभी न छोड़ो।

बस इसी मिल जुल के रहने का नाम गृहस्थी है और मर्यादा से चलना, दुख दर्द में सब के काम आना, उपकार करना, अपकार के समीप न जाना और धन व धर्म की वृद्धि में पुरुषार्थ रखना, इसी का नाम धर्म है।

अब इस के चलाने की नीति और रीति जो शास्त्र बताता है पहिले वह सुनिये-

मि. श्लो १२१

अहिंसासत्यमस्तेयं शौचमिंद्रियनिग्रहः।
दानं दमो दया क्षांतिः सर्वेषां धर्मसाधनम् ॥

अर्थ-किसी को पीड़ा न दो, सदा सच बोलो, पराई चीज़ न छुओ, शरीर और चित्त दोनों को शुद्ध और इंद्रियों को वश में रक्खो, दीन को दान दो, मन को मारे रहो, सब पर दया करो और संतोष को कभी न छोड़ो।

मि. श्लो. १२२,

वयोबुद्ध्यर्थवाग्वेषः श्रुताभिजन कर्मणाम्।
आचरेत् सदृशी वृत्तिमजिह्ममशठांतथा ॥

अर्थ—अवस्था, बुद्धि, अर्थ, वाक, भेष, पुरुपार्थ कुलाचार और मर्याद इन आठों के सदृश सब काम करो अर्थात् अपनी अवस्था और बुद्धि के अनुसार चलो, जो योग्य न हो, या समझ में न आवे, उस काम में हाथ न डालो, हर काम के प्रयोजन को पहले अच्छी तरह सोच विचार लो, बिना समझो बात न कहो कुल की अच्छी

रीति न छोड़ो—और मर्याद के साथ सब काम करो।

म. अ. ५, श्लो. १५०

सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहकार्येषु दक्षया।
सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया॥

अर्थ— स्वभाव हंसमुख रक्खे और हर दम प्रसन्न रहे, चतुरता से घर के सब काम देखे, चीज वस्तु सब सहेज के रक्खे और हाथ रोक के खर्च करे।

धीमा मधुर और हँसमुख स्वभाव होने से बड़ी सराहना होती है अपने परावे सब प्रीति करते, और काम काज में हाथ बटाये रहते हैं, झल्ले तीखे भोड़े स्वभाव वाले को कोई मुहँ नहीं लगाता और पास फटकने नहीं देता है।

प्रसन्न वदन रहने से काम में चित्त लगता और हर्ष और उमंग बढ़ता, उदास और कुढ़ते रहने से आलस बढ़ता और किसी काम को जी नहीं चाहता है।

सोच विचार और चतुराई से न वर्तने में एक तो काम बिगड़ता और ऊपर से हँसी होती है, इस लिये जो काम करे पहले ऊंच नीच सब सोच ले, उतावली कभी न करे। मसल मशहूर है जल्दी काम शैतान का।

किसी काम में कोई उलझन या कठिनता देख पड़े तो घबरा न जाय और न हिया हारे, सावधानी के साथ चित्त लगा के करे. कोई काम ऐसा नहीं जो मन लगा के करने से न होसके।

आपना काम दूसरे के भरोसे पर भी न छोड़े आप करे।

अपने असबाब की भी देख भाल और संभाल अच्छी प्रकार न रखने से नुकसान भी होता और वक्त पर दुःख उठाना पड़ता है।

और हाथ खुला रखने और वृथा खर्चा करने से तो गृहस्थी कभी बंधने नहीं पाती और नित्य मुहताजी खडी रहती है। जितनी चादर देखे उतना पैर फैलाये—हैसियत से ज्यादः न बढ़े, समय को देख विचार के चले।

इन सब नीति और रीति पर ध्यान रख के स्त्रियों को चाहिये कि आलस्य और उतावली छोड़ कर सावधानी और चतुराई के साथ हर्ष और उमंग से सब कामों को करे-बडे सवेरे पति और सासु ससुर के उठने से पहले सोके उठे, शौच हो स्नान कर प्रथम जगदीश्वर का चिन्तन और स्तुति प्रार्थना करे, फिर सासु ससुर के चरण स्पर्श और पति को प्रणाम करके घर के धंधे स्वामी और बडों की इच्छानुसार देखें। जो काम चाकरों से लेने के हैं उन से ले, जो अपने करने के हैं आप करे, भोजन बनाये, बडे छोटे हित मित्र संबन्धी आदि जो गृह में हों सबको सत्कार से खिलाये, फिर नौकरों तक को देकर अपने स्वामी को भोजन कराये और आप खाये।

यहां पर जो कोई यह तर्क करे कि यह कैसी अनुरीति, कि स्वामी और स्वामिन तो पीछे खांये और नौकर पहले, घर के मालिक को तो सब से पहिले खाना चाहिये, तो उत्तम यह है, कि प्रथम तो मालिक का धर्म है कि जो जो उस के अधीन हैं पहले उनका सुख देखे, दूसरे जो वह खालेगा, रसोई उठा डाली जायगी और उस समय कोई अतिथि आगया तो निराश जायगा, और पाहुन आया तो लज्जित भी होना पड़ेगा, फिर से भी रसोई बनवाई तो देर होगी और कदाचित कोई सामग्री घर में तय्यार न हुई तो और भी कठिनता पड़ेगी, इस लिये उसको सब से पीछे और आने जाने वालों का विशेष कर रस्ता देख के, खाना चाहिये, और यही धर्म शास्त्र का भी लेख है कि

मि. श्लो. १०५

बालासुवासिनीवृद्धागर्भिण्यातुरकन्यकाः।

संभोज्यातिथि भृत्याश्च दंपत्योः शेष भोजनम् ॥

अर्थात् बालक, विवाही लड़की, बूढ़ा, गर्भिणी, आतुर कन्या, अतिथि, नौकर चाकर सबको खिला के जो बचे स्त्री पुरुष खावें।

भोजन के पीछे धरने उठाने से छुट्टी करके कपड़े बदले, शृङ्गार करे. फिर जो और कार्य और व्यवहार हो उनको विचार के साथ देखे और सब कामों से सावकाश निकाल के चिट्ठी पत्री कहीं भेजनी हो तो वह लिखे, कुछ चित्र बनाना जानती हो तो बनावे, नहीं सीखे, सुई का काम करें और थोड़ी देर ज्ञान उपदेश नीति और वृत्तांत की पुस्तकें पढ़े और सुने।

संध्या समय फिर दिन की तरह सब को खिलावे पिलावे और आये गये का आदर सन्मान करके दिन भर के खर्च का हिसाब लिख डाले, और सब धंधों से छुट्टी कर और यह देख के कि घर के बड़े सोने जाचुके, अपने स्वामी की सेवा में जावे॥

पतिविदेश॥

जब पति विदेश में हो, लिखा है

मि. श्लो ८४

क्रीड़ां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनम्।

हास्यं परगृहे यानं त्यजेत्प्रोषितभर्तृका॥

खेल, शृङ्गार, समाज, और उत्सव में जाना, हंसी ठट्ठा करना और पराये घर रहना छोड़ दे।

स्वामी का स्मरण हर दम मन में रक्खे, और अपना काल गृहस्थी के धंधे, सीने परोने, लिखने, और धर्म चर्चा में काटे. निकम्मी कभी न बैठे, नीति शास्त्र का वाक्य है।

विद्याभ्यसनचित्रादि कर्म्मणांपरिपालनम् ।
विहित सावकाशेन स्त्रिया चलन चेतसः ॥

निकम्मे बैठने से, चित्त चलायमान रहता है. इस से चाहिये कि स्त्री, लिखने पढ़ने, चित्रादि बनाने, और तरह तरह के धंधों में लगी रहे ।

और ऐसी हालत में जो कदाचित् खर्च कम हो जाय और

वृतिं विधाय भार्यायाः प्रविशेत्कार्यवान्नरः ।
प्रेषितेत्वविधायैव जीवेच्छिल्पैरगर्हितैः ॥

अर्थ—जाते समय पति कोई बंदोबस्त न कर गया हो तो स्त्री शिल्प विद्या के द्वारा अपना निर्वाह करे—अर्थात् सीने परोने वेल बूटे इत्यादि बनाने से काम चलाये दुष्ट और नीच कर्म के पास न जाय

सास ससुर की सेवा और कुटुम्बीयों से प्रीत ॥

स्त्रियों का बहुत बड़ा धर्म यह भी है, कि सासु सासुर को माता पिता के समान जानें. नित्य सबेरे सांझ उनको प्रणाम करें, आज्ञा और भय मानें. इच्छानुसार चलें, जो कहें वही करें, और सेवा वंदना में लगी रहें—रायायण में कहा है

इहिते अधिक धर्म नहिं दूजा ।
सादर सासु ससुर पद पूजा ॥

और मनुस्मृति अ॰ २ श. १२२ में उपदेश है, कि

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोवलम् ॥

अर्थात् जो वड़ों को नित्य प्रणाम करते और उनकी सेवा में लगे रहते हैं. उनकी आयुष, विद्या, यश और बल चारों चीज बढ़ती हैं ।

इसी तरह जेठ जेठानी आदि सब बड़ों की मर्याद मानें, आदर सन्मान करें, देवर देवरानी ननद बालक इत्यादि छोटों पर दया प्रीति रक्खें, और सब कुटुम्बी और नातेदारों का यथा योग्य सत्कार करें और नीचे लिखी चौपाई की नीति पर चले

चौपाई ॥

भात पिता सम सासु ससुर में ।
कीजे भाव जाय पतिपुर में ॥
सेवा विधि मर्य्याद समेता ।
नारि धर्म कह बुद्धि निकेता ॥
अति आदर कर जेठ जिठानी ।
बालक सम देखत धौरानी ॥
बहन समान ननद को जानहु ।
शुद्ध भाव सबही में आनहु ॥
सब की सेवा पति के नाता ।
दर्सावहु गुण गण की बाता ॥

सबके साथ प्रेम से बर्तें, प्रिय वचन बोलें, निव कर चलें, वैर विरोध न रक्खें, मर्जी और सलाह से काम करें—यह नहीं कि जो जी में आया वही किया, किसी ने एक कहा तो सौ सुनाया, सास बोली तो मुहँ नोचखाया, डोली से उतरी और चूल्हे अलग तपाया ।

गृहस्थी का मुख्य धर्म है कि परस्पर प्रीति की वृद्धि हो एका रहे और अपना पराया जान न पड़े; वेद की श्रुति है कि

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषंकृणोमि वः ।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ॥

अर्थ—जैसे गाय अपने उत्पन्न हुये बछरे को चूमती हैं, वैसे

ही तुम वैर विरोध छोड़कर एक दूसरे से प्रीति पूर्वक व्यवहार करो

येन देवा न वियन्ति नोच विद्विषते मिथः ।

तत्कृण्मो ब्रम्ह वो गृहे सं ज्ञानं पुरुषेभ्यः ॥

अर्थ—जिस तरह देवता सब पर अनुकूल रहते और द्वेष भाव नहीं रखते हैं, उसी तरह तुम गृहस्थी लोग परस्पर प्रेम प्रीति से बर्तो और अपने ऐश्वर्य को बढ़ावो।

समानी प्रपा सह वो ऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि ॥

सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ॥

अर्थ–हे गृहस्थी लोगों तुम अपना जलपान खाना पीना सवारी आदि व्यवहार सब एक में रक्खो और जैसे चक्र के आरे चारों ओर से बीच को नाल में लगे रहते हैं, अथवा जैसे यज्ञ के करने और कराने वाले मिलकर अग्नि के सेवन से जगत का उपकार करते हैं, वैसेही तुम सब मिलकर हित व्यवहार करो।

आपस में मेल मिलाप और सुमति रखने से घर की शोभा बढ़ती, धन संपति की वृद्धि होती, और जग में बड़ाई मिलती है—और विवाद मचाने से लाख का घर ख़ाक में मिलता और धन धर्म सब नाश जाता है— कहा है

जहां सुमति तहां सम्पति नाना।

जहां कुमति तहां विपति निधाना ॥

घर के बड़े बांधव और संबंधियों से लड़ने और झगड़ने में बुरा फल तो मिलता ही है, मनुस्मृति में दासवर्ग तक से वैर विवाद रखने में परलोक बिगड़ना लिखा है, और प्रीति बनी रखने के वास्ते मिताक्षरा धर्मशास्त्र में यहां तक कहा है, कि संबंधी और प्रेमियों से जिनका आना जाना बहुत न होसकता हो, साल भर में एक बार अवश्य ही मिलें जिस में स्नेह में रुखता न पड़ने पावे।

इस लिये स्त्री को चाहिये कि मिलनसारी और नम्रता सीखे, बड़े छोटे सब से स्नेह करे, एका और सम्मति रक्खे, फूट घर में न आने दे, सब का कहा माने, कोई टेढ़ा भी हो तो आप सीधी रहे, कोई कितनाही क्रोध करे, आप माथे पर बल न पड़ने दे, अपना दोष हो तो लजाये, मन को मारे, क्रोध को रोके, जबान की मीठी, बात की सच्ची और हाथ की साफ रहे, छल, कपट, लगाई बुझाई, कुछ न करे, छिछोरा और लुच्चापन छोड़ दे, गम्भीर बने और इस नीति पर ध्यान रक्खे, कि

तुलसी या संसार में चारि वस्तु हैं सार ।
सत्य वचन, आधीनता, हरि सुमिरन उपकार ॥

आये गये का आदर भाव ॥

आये गये का सन्मान करना भी अति आवश्यक है-जो अपने घर में आवे वृद्ध हो तो उठके प्रणाम करे आदर से बैठाये, यथाशक्ति सेवा करे और जब जाने लगे दरवाजे तक पीछे पीछे जाय— इसी तरह बराबर बड़े और छोटों का भी यथायोग्य आदर करे और जो अपने में कुछ सेवा की सामर्थ्य न हो तो

तृणानि भूमिरुदकं वाक्चतुर्थी च सूनृता ॥

चटाई, भूमि, जल, और मीठे बोल, से ही मान करे ॥

अपने घर में छोटे से छोटा और बैरी से बैरी आवे तो उसको भी उठके आदर से ले, सत्कार से बैठाये, हित से बोले, और इस नीति पर चले

आवे घर कुल कोई नारी । लेहु स्नेह प्रीति कर भारी ॥
विनयसहित पूछहु कुशलाता । करहु स्नेह प्रेमरस बाता ॥

नीति ॥

किसी से गर्व की न ले, अपने आपको सब से छोटा समझे-

अड़ोसी पड़ेसी सब से हेल मेल रक्खे, दुःख दर्द में सब का साथ दे–कोई कुछ कड़ी भी कहे तो सह ले. मन में मैल तक न लाये, और भलाई करने से मुहँ न मोड़े–आप कष्ट उठाये, दूसरे को दुःख न दे उपकार करे, अपकार के पास न जाय।

मनुस्मृति का वाक्य है

म. अ. २. श्लो. १६१

नारुन्तुदः स्यादर्तोपि न परद्रोहकर्म्मधीः।
यया चोद्विजते वाचा नालोक्यान्तामुदीरयेत् ॥

अर्थ–अपने को दुःख भी पहुंचता हो तौ भी दूसरे को क्लेश देना, मन में भी किसी से द्रोह रखना, और ऐसी बात कहना जिस से किसी को खेद हो, योग्य नहीं, क्योंकि इस में अपनी ही हानि है

यथैवात्मा परस्तद्वद् द्रष्टव्याः शुभमिच्छता।
सुखदुःखानि तुल्यानि यथात्मनि तथा परे॥

अर्थात् दूसरे के दुख को भी अपने सा समझे, क्योंकि सुख दुख जैसा अपने को होता है वैसाही दूसरे को

परे वा बन्धुवर्गेवा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा।
आत्मवद्वर्तितव्यं हि दयैषा परिकीर्तिता॥

अर्थात् अपना हो या पराया मित्र हो वा शत्रु सब के साथ वैसे ही वर्ते जैसे अपने से

भीते क्षुधार्ते विकलन्तरान्तरे।
रोगाभिभूते बहुदुःखितान्तरे॥
दयान्तरंयः पुरुषो न सेवते।
वृथातंगतस्य नरस्य जीवितम्॥

अर्थ–भय क्षुधा रोग और दुखों से जो अति विकल हैं उन पर जो तरस नहीं खाता उसका जीनाही बृथा है

गुसाईं तुलसी दास का भी वचन है

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये जब लग घट में प्रान॥

शान्ति, क्षमा संतोष और धैर्य का सेवन भी गृहस्थियों का मुख्य धर्म है और सब से विशेष कर यह, कि मित्र से द्रोह न रक्खे किसी से विश्वासघात न करे, और जो अपने साथ थोड़ी भी भलाई करे उस का सदा उपकार माने

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च ये च विश्वासघातका।
त्रयस्ते नरकं यांति यावच्चंद्रदिवाकरौ॥

अर्थात् मित्र से द्रोह रखने वाले, उपकार को न मानने वाले, और जो विश्वासघात करते हैं, जब तक आकाश में सूर्य और चन्द्रमा हैं, ये तीनों नरक में रहते हैं॥

आलस्य, निद्रा, और जंभाई भी गृहस्थ धर्म के परम शत्रु, अनेक हानि की जड़ और पाप के घर हैं-शरीर, धन, और धर्म सब का इनके सबब से नाश होता, गृहकार्य पड़े रह जाते, और बिगड़ते हैं—किसी ने क्या अच्छा कहा है

"आलस निद्रा और जंभाई, ये तीनों हैं यम के भाई,,

जो स्त्रियां अपना हित और धर्म चाहें, इनके पास न जांय, पति की सेवा में तत्पर और घर के काज में फुरतीली बनी रहें॥

गृहस्थी के लिये लोभ भी बुरी बला है, सारे यश और गुण इस के कारण मिट्टी में मिल जाते हैं, कहा है

यशो यशस्विनां दिव्यं श्लाघ्या ये गुणिनां गुणाः।
लोभः स्वल्पोपि तान्हंति चित्ररूपमिवेप्सितम्॥

अर्थ— बड़े बड़े यशस्वियों के यश और गुणियों के उत्तम गुणों को थोड़ा भी लोभ ऐसा नष्ट कर देता है जैसे थोड़े फूल पड़जाने से

शरीर की शोभा जाती रहती है॥

अभिमान, सुरापान और अपने मुहँ अपनी बड़ाई करना इन की बुराई में कहा है।

अभिमानं सुरापानं गौरवं घोररौरवम्।
प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा त्रयं त्यक्त्वा सुखी भवेत्॥

अर्थ—अभिमानी शराबी और अपने मुहँ अपनी प्रशंसा करने वालों की यह दुर्गति होती है कि घोर नरक में सूअर की विष्टा पाते हैं, इस से जो बचना चाहे इन तीनों अवगुणों को त्याग दे।

स्त्री के वास्ते बाहर फिरना भी अच्छा नहीं—शास्त्र का प्रमाण है कि

"सततं गमनादनादरो भवति,,
नित्य फिरने से सत्कार नहीं रहता है

मनुस्मृति में भी मना किया और लिखा है कि

म. अ. ९ श्लो. १३

पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोऽटनम्।
स्वप्नोऽन्यगेहवासश्च नारीणां दूषणानि षट्॥

अर्थात् शराब पिना, बुरी संगत बैठना, इधर उधर फिरना, पति से वियोग रखनो, जब देखो तब सोना, और पराये घर रहना, ये ६ दोष स्त्रियों को नाश कर देते हैं, और यह भी कहा है कि

पाखण्डमाश्रितानाञ्च चरंतीनाञ्च कामता।
गर्भभर्तृदुहाञ्चैव सुरापी नाञ्च योषिताम्॥

अर्थात् जो स्त्री पाखण्ड करती, निन्दित वस्त्र पहिरती, जहां तहां गर्भ गिराती, पति को मारती, या जो शराब पीती है, उसको मरे पर जल भी न दिया जाय।

और मितक्षरा धर्म शास्त्र में यह भी आज्ञा है कि

सुरापी व्याधिता धूर्ता वन्ध्यार्थघ्न्यप्रियंवदा ।
स्त्रीप्रसूश्चाधिवेत्तव्या पुरुषद्वेषिणी तथा ॥

अर्थ-जो स्त्री मदिरा पीती छल करती, धन लुटाती, कठोर वचन बोलती या पति से वैर रखती हैं उसको छोड़ के पुरुष दूसरा विवाह कर ले

हारीत स्मृति का वाक्य है

शीलमेव परो धर्मो नारीणां नृपसत्तम ।
शीलभंगेन नारीणां यमलोकं सुदारुणं ॥

अर्थ—स्त्रियों का मुख्य धर्म यह है कि शील संयुक्त रहे जो स्त्री शील को तोड़ती है यमलोक को प्राप्त होती है ।

लज्जा स्त्रियों का बहुत बड़ा भूषण है और उनकी इसी में शोभा है कि सदैव इस से मण्डित रहें और ऐसा यत्न रक्खें, कि निर्लज्जता की झाईं पड़ने न पाय, मैले चलन से प्रतिष्ठा न जाय, चाल ढाल में कोई खोट न बताय, ओढ़ने पहिनने में कोई अंगुली न उठाय और लोकापवाद से अपने आप को यों बचाय, कि चिल्ला के न बोले, फूहड़ शब्द मुहँ से न निकाले, पर पुरुष से बेधड़क बात या हँसी ठट्ठा न करे, अंग अंग अपना छिपाये रहे, गली बाजारों में बेपर्द न निकले, मेले तमाशे में न फिरे, गंगा यमुना न जाय, नदी तालाब अथवा और किसी खुले स्थान में न नहाये, किसी के घर जाने का प्रयोजन पड़े तो नौकरों के संग न जाय, घर के पुरुष या बड़ी बूढ़ी को साथ ले—घबराई हुई, या हाथ झुलाती कन्धे मटकाती, चमकती और इठलाती न जाय, माथा झुकाये मुहँ पेट छिपाये और पुरुषों को बचाये धीरे धीरे चले और इधर उधर न देखे बुरी संगत में न बैठे, बेहया, मनमाती फिरने वाली, वेश्या कुटनी, पतिद्रोही चुगलखोर, बदचलन, फकीरनी, और धोबिन

इत्यादि नीच स्त्रियों से हित न बढ़ाय, और जो बराबर की न हों उन्हें गुइयां न बनाये ॥

बे समझे बूझे कोई बात न कहे, विचार और चतुराई से सारे व्यवहार बरते, सूधापन और उदारता स्वभाव में रक्खें मान महत्व को नित्य बढ़ाये और

विद्यया वपुषा वाचा वस्त्रेण विभवेन च ।
वकारैः पञ्चभिर्युक्तो नरः प्राप्नोति गौरवम् ॥

विद्या वपु (शरीर) वचन (बोल) वस्त्र और विभव (धन) जो ये पांच प्रकार बड़ाई देने वाले हैं इनके संग्रह का रात दिन उद्योग करे क्योंकि

(विद्या)

सतगुण विद्या बिन पढ़े नहिं पावत है कोय ।
कहा पुरुष नारी कहा कोई किन ना होय ॥

स्त्री चाहे कैसीही भली क्यों न हो पर बिना पढ़े अपने धर्म कर्म का पूरा पूरा निर्वाह नहीं कर सकती, वेद पुराण और नीति सब यही कहते हैं कि जो स्त्रियां अपना भला चाहें, वे

शास्त्रं प्रज्ञा धृतिर्दाक्ष्यं प्रागल्भ्यं धारयिष्णुता ।
उत्साहो वाग्मिता दार्ढ्यमापत्क्लेशसहिष्णुता ॥
प्रभावः शुचिता मैत्री त्यागः सत्यं कृतज्ञता ॥
कुलं शीलं दमश्चेति गुणाः संपत्तिहेतवः ॥

अर्थात् शास्त्रों को पढ़े, गम्भीर बने, चतुरता सीखे, पतिव्रत में दृढ़ रहे, देखी सुनी बातों को याद रक्खे, मेहनत और उद्यम करने से न हटें, मीठा बोले, दुख को सहे, मान और महत्व को बढ़ावे, देह और मन पवित्र रक्खे, सबका सत्कार करे, बुरी बातों को छोड़े,

सदैव सच्च बोले, जो भलाई करे उसका उपकार मान, सुशील बनें, प्रतिक्षण प्रसन्न रहे, और इंद्रियों को चंचल न होने दे ॥

देखती हो कि इस श्लोक में भी सब से पहले पढ़ना ही लिखा है क्योंकि बिना पढ़े बुद्धि शुद्ध नहीं हो सकती और शुद्ध बुद्धि के बिना और कर्मों का निर्वाह कठिन है ॥

लोक परलोक दोनों का सुख केवल विद्याही द्वारा प्राप्त होता है, यही पाप और अधर्म के मार्ग से बचाती और यही संसार में यश दिलाती और शोभा बढ़ाती है । नीति शास्त्र का श्लोक है कि

विद्यया साधिता नारी भूषयालंकृता यदा ।
तदा विभूषितां मन्ये ततुहेम्ना विभूषिता ।

जब स्त्री विद्या के भूषण से सजी होती है तभी और गहने भी शोभा देते हैं बिना इस भूषण के सोने से चाहे कितनी ही लदी हो भली नहीं मालूम होती । इसी आशय में किसी कवि ने क्या अच्छा सवैया लिखा है कि

शोभा न देइ बिजायट बाहु में हारहु चन्द्र समान सजाये । फूल कि माला बनाइ लसे तन धोय के चन्दन स्वच्छ लगाये ॥ पानहु खाय सुवस्त्र धरे भल सूंघे सुगन्धहु बार बढ़ाये । बाग बिभूषण हीन न सोहत सारे अलंकृत जात न गाये ॥

नीति शास्त्र का एक यह श्लोक भी है कि

रूपयौवनसम्पन्ना विशालकुलसम्भवाः
विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः ॥

रूप यौवन संपति कुल सब कुछ अच्छा पाया हो तौ भी एक विद्या के न होने से जिस तरह असुगन्धित ढाक का फूल पूछा नहीं जाता, कहीं शोभा नहीं होती है ।

मैने महादेव और पार्वती के संवाद में भी एक प्रसंग पढ़ा है जिस में लिखा था कि पार्वती जी ने एक समय महादेव जी से पूछा कि महाराज स्त्रियों को पाप से निर्वृत्ति होने का क्या उपाय है, और आपने बतलाया कि जो स्त्रियां निर्दोष रहना चाहें पढ़ा लिखा करें।

इस लिये उचित है कि जो स्त्रियां कुछ लिखा पढ़ी हैं वे नीति और धर्मशास्त्र की पुस्तकों के विचार से अपनी बुद्धि और विद्या को बढ़ावें और जिन्होंने बाल अवस्था में कुछ भी शिक्षा नहीं पाई है वे मन लगा के लिखना पढ़ना सीखें, पर इतनाही नहीं कि बुरे भले अक्षर गोद लेना और सखीविलास व हातमताई इत्यादि के किस्से पढ़ना आजाय, जिन से और बुद्धि भ्रष्ट होता और स्वभाव में निर्लज्जता आजाती है। उनको चाहिये कि अक्षर ज्ञान होने पर पहले छोटी छोटी पोथियां जैसे शिक्षाभवन बुद्धिप्रकाशिनी स्त्री-शिक्षा लक्ष्मी-सरस्वती-संवाद नारी-सुदशा-प्रवर्तक स्त्री-सुबोधिनी इत्यादि पढ़ डालें, फिर ढूंढ़ ढूंढ़ के ऐसी पुस्तकों को पढ़ें जिनमें सती धर्म, पतिप्रसन्नता, संतानपालन, धनरक्षा और गृहकार्य की रीतियों का विधान हो, व्यवहारों में चतुरता के हेतु इतिहास देश और लोक वृत्तांत का पोथिया देखा करें, नीति उपदेश धर्म और ज्ञान के ग्रन्थ समझ के पढ़ें और विचारें जिसमें बुद्धि प्रबल हो धर्म अधर्म का बोध और सत्य असत्य का विवेक आवे ॥

पढ़ने में जहां न समझें किसी से पूछने में न लजायें, अपने पति से पढ़ें पुत्र से पूछें या और कोई अपना छोटा वा नीच कुल का भी हो तो उस से भी सीखने में संकोच न करें; कहा है कि गुण विद्या सुन्दर वचन और अच्छे आचार नीच बालक वा शत्रु से भी मिलें तो ग्रहण करने चाहियें ॥

लिखने में अक्षर बना बना के लिखें हिसाब लगाना भी सीखें सूपशास्त्र जिस में नाना प्रकार के भोजन बनाने का विधान है पढ़ें शिल्प अर्थात् दस्तकारी विद्या भांति भांति के सुई के काम बनाना और चित्र खींचना भी जी लगा के सीखें और इसी तरह जहां तक गुण सीख मिले उनको प्राप्त करने में लगी रहें ॥

बहुतेरी आलसी और मूर्ख स्त्रियां कहेंगी कि अपना धन्धा तो निपटता नहीं यह सब तितम्बे कौन करे, और किसको इतनी छुट्टी जो पोथी पट्टी लिये बैठी रहे ॥

उनका उत्तर यह है कि जो आप दिन चढ़े तक पड़ी पलंग तोड़ती और अंगड़ाइयां लेती हैं, घंटों दासी और टहलुइयों से ठायँ ठायँ मचाती और अनेक फूहड़पने में दिन गँवाती हैं, वही समय बचाइये और इन हितकारी कामों में दीदा लगाइये, तौ भी बहुत कुछ आसकता है, क्योंकि कहा है

कौड़ी कौड़ी जोड़ के धनी होत धनवान।
अक्षर अक्षर के पढ़े पण्डित होत सुजान॥

और जो कृपा करके आलस छोड़िये और रात दिन के २४ घंटे इस रीति से बांट दीजिये कि १० बजे रात को सोइये,४ बजे उठिये, ५ बजे तक शौच स्नान करके घड़ी भर ईश्वर का स्मरण भग्वद्गीता और जो गुर्मुखी जानती हो तो जपजी साहब और गुरू ग्रन्थ साहब का पाठ कर डालिये, ६ बजे से पहले, बच्चे हों तो उनका. मुहँ हाथ धुला कपड़े पहना बाहर हवा खिलाने भेज दिजिये और जब तक झाड़ू बहारू चौका बासन हो, रसोई की सामग्री ठीक कर डालिय और ९ अथवा १० बजे तक खिलाने खाने से छुट्टी करके दो घंटे गृहस्थीके काम और असबाब के सँवारने सँभालने में खर्च . कीजिय, फिर २ बजे तक लिखिये पढ़िये, दो घंटे सुई का काम और चित्र

आदि बनाइये, एक घंटा भर बच्चों का लिखना पढ़ना देखिये और उनको फुसलाइये, ६ बजे सांझ की रोटी पूरी बनो ९ बजे तक सबको खिला, धरा उठाई कर और तमाम दिन के खर्च का हिसाब ठीक लगा. स्वामी की सेवा में जाइये तो इस तरह सब काम पूरे पड़ जायंगे और थोड़े ही दिनों में आप गुणवती, विदुषी, बुद्धिमती और ज्ञानवती सब कुछ होजायेंगी और विद्या के बल से अपने प्राण पति को भी उस के व्यवहारों में सहायता देने लगेंगी। नीति शास्त्र कहता है

यस्यास्ति भार्या पठिता सुशिक्षिता।
गृहक्रिया-कर्म-सुसाधने क्षमा॥
स्वजीविकां धर्म धनार्जनं पुनः।
करोति निश्चित मथो हि मानुषः॥

अर्थात् जिसकी भार्या अच्छी पढ़ी लिखी और घर के कामों में चतुर होती है, वह पुरुष अपनी जीविका धन और धर्म का संयम अच्छी प्रकार से कर सकता है॥

इसके सिवा लिखी पढ़ी और गुणवाती स्त्री विपत्ति कालमें दुःख नहीं उठाती, अपनी विद्या और गुणों से उत्तम रीति और धर्म क साथ निर्वाह करती, शिल्प विद्या के बलसे नई नई चीज अपनी बुद्धि से बनाती, सुन्दर तसवीरें खींचती, पोथियां लिखती, और अनेक गुणों से धन अर्जन करके आप सुख से रहती, बच्चों को पालती और उनको लिखाती पढ़ाती हैं॥

फिर उत्तम शिक्षा भी उन्हीं के बालक पाते और भाग्यमान होते हैं, जो स्त्रियां आप विदुषी और गुणवती होती है, और जो मूर्ख हैं उनकी सन्तान भी मूर्ख ही होती है। जैसा कहा है-

यावद्धि साक्षरा माता तावत्बालाश्च बालिकाः।

निरक्षरा हि तिष्ठन्ति विनोपायसहस्रकैः ॥

अर्थ-जिनकी माता पढ़ी नहीं होती है उनकी शिक्षा में बड़ा उपाय करना पड़ता है॥

कारण इस में यही है कि जब स्त्री आप ही कुछ नहीं जानती तो बच्चे को क्या सिखा सकती है, वह तो यह भी नहीं जानती कि बच्चा क्यों कर बनता और क्योंकर बिगड़ता है॥

जो स्त्रियां शास्त्र जानती हैं, उनको इसकी रीति अच्छी तरह से मालूम होती है, और वह गर्भही काल से यत्न करती हैं, कि बच्चा बिगड़ने न पावे, और जन्म होने से उसका स्वभाव बनातीं और ऐसे ढब डालतीं हैं कि ज्यों ज्यों शरीर उसका बढ़ता, बुद्धि भी बढ़ती जाती है, और स्याने होने पर थोड़ेही परिश्रम में वह सर्व विद्यानिधान होजाता है॥

जहां स्त्रियां पढ़ी नहीं होती हैं उस देश में मूर्खता का अंधकार छाजाता और दरिद्रता घेर लेती है। दृष्टांत में यही अपना देश प्रत्यक्ष है, जो अगले समय में विद्या का घर कहा जाता था, जहां के मनुष्यों को देवता की पदवी थी, सत्य और धर्म में जिस के झंडे गड़े थे, सारी पृथ्वी के मनुष्यों ने जहां से विद्या का प्रकाश पाया था, गुण संपति किसी वस्तु की जहां कमी न थी, और अब जब से विद्या और गुणों का यहां से लोप हुआ, वह अभाग्य छाया है, कि दूसरे देश के लोग यहां के मनुष्यों को पशु समान जानते और महा तुच्छ समझते हैं।

एक वह समय था कि देश देशांतर से लोग अनेक शास्त्र पढ़ने यहां आते थे, अब यहां के लड़के विद्या सीखने लंदन जाते और वेद और शास्त्र की पोथियां जरमन देश से मंगाते हैं॥

दस्तकारी विद्या ऐसी सत्यनाश गई कि विलायत से कपड़े

आवैं तो पहिने और सुई धागा आवे तो सीये जायें, नहीं तो लोग नंगे फिरें और कुछ यही नहीं जोंही चीज न आये, उसी का तोड़ा, यहां तक कि दियासलाई न आये, तो दीया भी न जलाया जाय ॥

धर्म्म का ऐसा नाश होगया कि जितने अधर्म हैं पुण्य समझे जाते हैं। पुत्र को पिता से वैर, पत्नी को पति से विरोध, कन्या को माता से विवाद, परमेश्वर में निश्चय नहीं, भूत प्रेत पूजे और मियां पीर मनाये जाते हैं और दरिद्रता ने तो घेरा ऐसा कि दाने दाने को मुहताज-इन सब दुर्दशा का कारण विशेष कर यहां की स्त्रियों की मूर्खता है, कि उनके अनपढ़ होने से आवां बिगड़ गया, आगे यह बात न थी, स्त्रियां यहां की बड़ी बड़ी ज्ञानी, बुद्धिमती और पण्डित होती थीं. और इसी सबब से इनकी संतान भी वैसेही प्रतिष्ठित, प्रतापी, विद्वान और गुणवान निकलती थीं, दृष्टान्त में दो चार नाम भी सुन लीजिये ॥

देखिये कपिल मुनि की माता का नाम देवहूनी था जो ऐसी विदुषी थीं कि उन्होंने सांख्य शास्त्र का प्रचार किया, कश्यप मुनि की स्त्री ने अर्थशास्त्र बनाया, कौशिल्या जी ने नीति शास्त्र लिखा, सुमित्रा ने धर्मनीति वर्णन की. मन्दालसा इतनी बड़ी ज्ञानवान थीं कि अपने पुत्र को ब्रह्मज्ञान सिखाया, विदुला ने अपने बेटे को आप राजनीति पढ़ाई, विद्याधरी को देखिये कैसी पण्डिता थीं कि शंकराचार्य्य ऐसे महा मुनि को शास्त्रार्थ में परास्त किया इसी तरह अदिती, अनुसूया' शतरूपा, कुन्ती, द्रौपदी, सरस्वती, रुक्मिणी, रेणुका, चंद्रमुखी, मन्दोदरी, मायावती इत्यादि बहुत सी स्त्रियां महा पण्डिता होगई हैं ।

जो कोई यह कहे कि यह सब तो अगले युगों की स्त्रियां और देवियां थीं हमारी उनकी क्या बराबरी, तो इस युग की स्त्रियों में

भी दो एक नाम सुनिये, लक्ष्मीदेवी दक्षिण देश की एक ब्राह्मणी जिसकी मितक्षरा धर्मशास्त्र की टीका आज बनाई हुई मौजूद है जो वल्लभ भट्ट के नाम से प्रसिद्ध और प्रामाणिक ग्रन्थ है, राजा शरदानन्द की लड़की विद्योत्तमा जिसके साथ शास्त्रार्थ में बड़े बड़े पण्डित हार गये. मीराबाई कविता में कैसी निपुण होगई है कि उसके बनाये हुए हजारों विष्णुपद सर्वत्र गाये जाते हैं, अहिल्या बाई जिसका नाम आज तक चारों दिशाओं में प्रसिद्ध है, कैसे विदुषी और बुद्धिमती थी कि विधवा होने पर तीस वर्ष तक उसने मालव देश में राज किया, आस पास के राजाओं ने बहुतेरा चाहा कि उस का राज छीन लें पर कोई उसकी बराबरी न कर सका, सारे राज का काम वह आप देखती और दर्बार में बैठ कर न्याय करती थी ॥

अब इन पिछली बातों और पिछली स्त्रियों को छोड़ के जरा मेमों को देखिये, जिन्हें आप मनुष्यों में भी म्लेच्छणी कहती हैं और शर्माइये। देखिये तो एक से एक कैसी विदुषी, बुद्धिमती गुणी और चतुर हैं, क्या यह घर द्वार नहीं रखतीं, और इनको कोई धन्धा नहीं रहता है, आपको तो अपनी देशभाषा सीखना कठिन है, और वे तो अपनी देश भाषा के सिवा अनेक विद्या और गुण सीखतीं. अंगरेजी, फ्रांसीसी, अर्बी, फारसी, हिंदी, संस्कृत, सब कुछ पढ़लेती हैं और दस्तकार भी कैसी होती हैं, कि आप उनके हाथ के मोजे, दस्ताने, गुलूबंद, फूल,बूटे, इत्यादि बनाये हुये देख देख कर भौचक्की हो रहती हैं, तसवीरें कैसी खींचती हैं कि मानों जान डालदीं

इसी लखनऊ शहर में मेरे एक परम मित्र मिस्टर तामस साहब कौंसली की अति सुशीला पतिव्रता भार्या विद्या और अनेक गुणों

में तो संपन्न ही हैं, तसवीर भी ऐसी सुन्दर खीचती हैं कि बड़े बड़े तसवीर खीचने वाले उनकी बराबरी नहीं कर सकते, आज साहब के बैठने वाले कमरे में दो तसवीरें मेम साहब की बनाई हुई टँगी हैं, जिन का मोल पांच २ सौ रुपया भी तुच्छ है, फिर देखिये कि ये बुद्धिमती स्त्रियां कितनी भाग्यवती भी हैं, कि धन पूत और लक्ष्मी सब से परिपूर्ण, और यहां की अभागियों को रोटियां तक नहीं जुटतीं, क्यों ? इस कारण से कि वह तो चाहै कितनी ही धनाढ्य हों कभी निकम्मी न बैठेंगी कुछ न कुछ काम हर दम करती अपनी विद्या और गुणों को बराबर बढ़ाती रहती हैं, यहां तक कि श्रीमती महाराणी विक्टोरिया भी, जिनका इतना बड़ा राज्य था कि जिसमें कभी सूर्य अस्त नहीं होता और बड़े बड़े राजे महाराजे जिनके अधीन थे, कभी बेकाम नहीं रहती थीं और यहां जिन स्त्रियों को जरा भी सुख हुआ पान तक अपने हाथ से बनाकर नहीं खातीं कुर्ती का बंद भी टूट जाये तो दर्जी से सिलाती हैं।

बस यहां इसी अविद्या और आलस्य ने यह मुसीबत ढाई है ॥

अब जो मैंने ऊपर लिखा है कि पढ़ी लिखी और बुद्धिमती स्त्रियों की सन्तान भी वैसी ही उत्तम होती है, उसका भी मुकाबिला अपने देश के मनुष्यों से कर लीजिये, देखिये तो यह साहब लोग जो विदुषी स्त्रियों की औलाद हैं, कैसे विद्यानिधान, गुण और बुद्धि की खान, तेजस्वी और प्रतापी हैं, जो आप के देश में राज्य करते, और यह आप के मनुष्य कैसे मूर्ख, दरिद्र, और अभागे हैं, जो उनकी जूतियां उठाते और उस पर भी रात दिन दुत्कारे फिटकारे जाते हैं, जो आप भी आलस्य को छोड़ें विद्या और गुणों को सीखें, तो आपकी सन्तान भी वैसी ही भाग्यवान होजावे, मूर्खता और दरिद्रता देश से जाती रहे ॥

शरीर और आरोग्यता।

दूसरा वकार वपु अर्थात् शरीर है, जिसको बचाना और निरोग रखना भी अति अवाश्यक, है क्योंकि

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम्।
रोगास्तस्यापहर्तार. श्रेयसां जीवनस्यच॥

अर्थात् धर्म अर्थ काम और मोक्ष चारों का मूल कारण निरोगता है, रोग होने से स्वास्थ्य अर्थात् तनदुरुस्ती सुख और जीवन सब नष्ट होजाते हैं।

संसार के सारे व्यवहार.शरीर की पुष्टता, बल और सुखी होने के अधीन हैं, जहां यह दुर्बल हुआ रोगों ने आ घेरा, रंग रूप सब जाता रहा, और सुख व आनन्द ने जवाब दिया, इस वास्ते बड़ी रोक इसकी चाहिये कि शरीर टूटने और बल घटने न पावे, नहीं तो सैकड़ों ही उपाधि उत्पन्न होंगी और जान भारी होजायगी, मसल मशहूर है कि एक कमजोरी हजार बला॥

श्रम।

निरोगता के निमित्त शरीर के जितने अंग हैं, वे सब श्रम चाहते हैं, काम न करने से कर्म-इंद्रियां शिथिल होजाती, अनेक रोग उत्पन्न होते और स्त्रियां तो बहुधा बांझ हो बैठती हैं, जनन शक्ति जाती रहती है, और दैव संयोग से बालक होते भी हैं तो छोटे २ और जनने में बड़ी पीड़ा पाती हैं॥

हवा खाना।

इस के सिवा तन्दुरुस्ती के लिये ताजी हवा, और वह भी विशेष कर सवेरे की, बहुत ही दर्कार है, जो वैद्यक शास्त्र लिखता है कि रोगों को दूर करती, शरीर को बल पहुंचाती, और बुद्धि और उत्साह को बढ़ाती है, इस वास्ते परिश्रम करना, बड़े सवेरे उठना और हवा खाना अत्यन्त आवश्यक है॥

टहलना और धन्धा करना।

जो स्त्रियां परदे के सबब घर के बाहर नहीं जासकती हैं, उनको यह उचित है कि नित्य थोड़ी देर घर के आंगन में टहलें और कामं धन्धा करने में शरीर से इतना श्रम लें, कि पसीना आजाय, क्योंकि इस से एक प्रकार का विष जो शरीर में होता है निकल जाता है, और चलने फिरने और मिहनत करने से खाना पचता, कोठा शुद्ध रहता, मुख का रंग निखरता, गालों पर लाली आती, आंखों की जोत बढ़ती, और देह सुन्दर बनी रहती है, और इसी लिये वैद्यक शास्त्र बारंबार प्रेरणा करता है, कि जो स्त्रियां अपना हित और सती धर्म का निर्वाह चाहें, आलस्य को छोड़ें क्षण मात्र भी खाली न बैठें कुछ न कुछ धन्धा बराबर करती रहें॥

स्नान।

ठंढे जल से रोज नहाना भी शरीर को पुष्ट करता और मन को हर्ष देता है, परन्तु यों नहीं कि देह भीगे या न भीगे दो लोटे उंडेल लिये, इस से न देह शुद्ध होती है, न मन स्नान की विधि यह लिखी है, कि पहले हाथ मलकर धोये; फिर मुंह पर पानी के छींटे डाले, और प्रथम हाथों से फिर अंगोछे से मले और इस तरह नाक कान भी साफ करे, इसके उपरांत अंगोछा तौलिया, या खीसा जो कुछ हो, उसको भिगो भिगोकर गर्दन पेट इत्यादि सब अंग खूब मले, और धोती जाय, कंधा पीठ और कमर बड़े अगोछे या तौलिया से अच्छी तरह रगड़े, और यों सारा बदन खूब मल के सिर से नहाये॥

नहाने के वास्ते घर में हौज़ हो तो सब से अच्छा, नहीं तो पीतल तांबे या टीन का एक बड़ा बासन ऐसा बनवा ले जिस में बैठ सके और यह भी न होसके तो काठ का पीपा मंगाले और बीच से कटवा कर दो टब बनवाले और उसी में बैठ कर नहाये॥

स्नान जब कर चुके तो पांव जल में डाल कर अंगोछे से मले और अंगुली अंगूठे, गाई खूब रगड़ कर धोये और जल छोड़ती जाय।

नहाने और इन सब कामों में देर न लगाये, विशेष कर जाड़े में, और शरीर को ऐसा पोंछे कि पानी का अंश न रहने पाये, फिर कपड़े बदल कर थोड़ा चले फिरे, जिस में शरीर गर्मा जाय॥

इस विधि से नित्य नहाने और देह मलने से बड़ा गुण होता है शरीर कड़ा और पुष्ट होजाता और रोग जल्दी पास नहीं आता है।

जब स्त्री मासिक धर्म से होये, उन दिनों पानी और ठंढ दोनों से बहुत बचकर रहे, ठंढे जल से पैर तक न धोये, न कोई ठंढी चीज खाये, और अति परिश्रम भी न करे, मन को प्रसन्न रक्खे, चिन्ता किसी प्रकार की जी में न लाये॥

प्रसन्नता।

प्रसन्न चित्त रहने और हंसमुख होने से भी तन्दुरुस्ती बढ़ती, मुख पर शोभा आती, और आयु दीर्घ होती है, इस वास्ते उचित है कि स्त्रियां सर्व काल में चित्त को प्रसन्न, मन को शांत, हृदय को शुद्ध और स्वभाव को मधुर रक्खें॥

क्रोध इत्यादि

क्रोध, डाह ईर्षा शोक और भय आरोग्यता के परम शत्रु हैं, और चिन्ता तो ऐसी बला कि कहा है

चिताचिन्ता द्वयोर्मध्ये चिन्ता चैव गरीयसी।
चिता दहति निर्जीवं चिन्ता दहति जीवितम्॥

अर्थ—चिन्ता चिता से भी बड़ी है, क्योंकि चिता तो मरे पर और चिन्ता जीते ही जी जलाती है।

यह सब अवगुण शरीर को तोड़ देते हैं। वैद्यक शास्त्र में लिखा है कि इनके सबब से रुधिर में एक प्रकार का विष पैदा होजाता

है भूख बंद हो जाती, पेट साफ नहीं रहता, कपोलों पर गढ़हे पड़-जाते, मुख की रंगत जाती रहती, और आयु भी कम होजाती है ॥

आग और धूप तापना।

आग तापना और धूप में बैठना भी वैद्यक शास्त्र में निषेध है इस से भी अजीर्ण होता, शरीर ढीला शिथिल और निर्बल होजाता, रंग मैला और पीला पड़ जाता और मुख की शोभा जाती रहती है॥

धर्म शास्त्र में भी आग को मुहँ से फूकना और पैर सेकना वर्जित है ॥

मनुस्मृति अ० ४. श्लो०. ५३ यह है
नाग्निम्मुखेनोपधमेन्नग्नान्नेक्षेत च स्त्रियम्।
नामेध्यं प्रक्षिपेदग्नौ न च पादौ प्रतापयेत्॥

अर्थ—अग्नि को मुहँ से न फूके स्त्री को नग्न न देखे कोई बुरी वस्तु अग्नि में न डाले और न पैर तापे॥

आहार।

आहार भी ऐसी चीज है, जिसके बिना कोई जी नहीं सकता, पर साथही उसके यह विष का गुण भी रखता है, जितना पथ्य भोजन गुण करता है, उतना ही कुपथ्य अवगुण, परंतु बहुतेरी स्त्रियां इसका कुछ बिचार नहीं करतीं, भला बुरा कच्चा पक्का जो मिला, खा लेती हैं और बहुत सी तो ऐसी मूर्ख हैं, कि पकाने का ढब भी नहीं रखतीं, कोई पदार्थ जला देतीं कोई कच्चा उतारतीं हैं, न नमक और पानी का अंदाज जानतीं,न भला बुरा स्वाद पहिचानतीं ह, और रंग रूप ऐसा घिनोना कर देतीं,कि देखते ही जी फिर जाय उस पर स्वभाव की भी ऐसी कर्कशा कि पति अभागा कुछ कहता, तो जवाब भी जला कटा पाता है, कि जिसको न भाये बना खाये-ऐसी ही कुलक्षणियों के कारण बहुतेरे घरों में रीति बँध जाती है, कि राति का खालु तो नितही बाजार से आता और बहुधा दिन

में भी अनेक चीजें जो घरे में पक सकती हैं, मोल मँगा के खाते हैं बस जिस घर की यह रीति हो और जहां ऐसा कुलक्षणी घरवाली हो, वहां रोग की क्या कमी और कल्याण का कहां ठिकाना । गुसाई जी भी कह गये हैं कि

जानो दारुण सागफल मिलहि दुष्ट जिहि नारि ॥

और नीति शास्त्र का भी वाक्य है

कुगेहिनीः प्राप्य कुतो गृहे सुखम् ॥

अर्थ—जहां घरवाली बुरी हो वहां सुख कैसा ॥

और गुण न हो तो किसी प्रकार निर्वाह हो भी जाय, पर अहार तो जीव का आधार है, जो यह भी अच्छा न मिला, तो रोग क्या मृत्यु को भी उडीकना नहीं पड़ता ॥

रसोई बनाना स्त्रियों का मुख्य काम है उनको चाहिये कि चित्त लगाकर इसको सीखें; सूपशास्त्र का पोथियों को जिस में नाना प्रकार के भोजन और व्यञ्जन बनाने की विधि लिखी है पढ़ें और उन्हें संस्कार से बनावें। सुपक, और कुपक का बडा ध्यान रक्खें, कोई चीज जलने न पाये, न कच्ची रह जाये, बू बास, रंग रूप और स्वाद की सुन्दर उतरे, पकाने और खाने में हर चीज के गुण अवगुण को भी विचार लिया करें, जो वस्तु विकार करे कभी न बनायें और न खायें ॥

आहार वही श्रेष्ठ है, जो साधारण और स्वाभाविक हो, स्वाभाविक उसको कहते हैं, जो रुचि के साथ नित्यही खाया जाता और कभी उससे मन नहीं हटता है, जैसे रोटी, दाल, चावल, मांस इत्यादि, बाकी जितनी बनावट की चीजें हैं, दो दिन खाने से मुहँ फिर जाता है और वह सिवा अवगुण के कोई गुण नहीं करती, इस लिये सदा साधारण, पुष्ट और सादा आहार करना चाहिये और

पर फेर के ॥

इसका वडा विचार रहे कि खाने में ठोस और अग्नि घटाने वाले पदार्थ न हों, न रूखा, सूखा, सडा, बुसा, जला और कच्चा अन्न खाय, क्योंकि इस से अजीर्ण होता, स्वभाव बिगडता, रूखा करकसा, और चिडचिडा मिजाज होजाता, और दूध पीने वाले बच्चे को तो ऐसा अहार बहुत ही विकार करता है ॥

बहुधा स्त्रियां रसोई से पहले वासी अथवा पक्वान्न कुछ खा लेती हैं, खाली पेट में ये चीजें नुकसान करती हैं, शक्ति हो और कोई विकार भी न करे तो उस समय थोडा दूध पीले, अथवा मक्खन खायँ। दुर्बल शरीर को ताजा दूध वा मक्खन बहुत ही गुण करता है ॥

बहुत सा खाना भी अच्छा नहीं इस से कोठा बिगडता और बल घटता है, उतना खाना चाहिये जो अच्छी तरह से पच जाय और गुण करे ॥

बेभूख भी कभी न खाये और न वह चीज जिस पर रुचि न हो

बेर बेर खाना भी बुरा है, एक वार का खाया हुआ तीन घंटे से कम में नहीं पचता है, इस लिये एक चीज खाने के वाद दूसरी चीज के खाने में चाहे थोड़ी भी हो कम से कम तीन घंटे का अंतर जरूर दे, और भोजन का समय नियत कर रक्खे, यह नहीं कि कभी सवेरे और कभी अवेरे खाय, और जब थकित हो उस समय कभी न खाय।

बहुत गरम खाना भी न खाये कि इस से प्रमेहादि रोग उत्पन्न होजाते हैं और न विरुद्ध भोजन कभी करे, जैसे दूध और गुड के संग मछली, खीर के साथ नीवू, तेल के संग दही, मूली के साथ मीठा इत्यादि, और न बहुत चिकना खाय, न ज्यादः खटाई, मिठाई मिर्च, राई या और कोई गर्म चीज, क्योंकि इन से पित्त बढ़ता है ॥

खाना बड़ी सुथराई के साथ खाय बच्चा हो तो उसका नाक, मुहँ हाथ सब पहले अच्छी तरह से धो पोछ दे और कोई घिनौनी चीज सामने न रहने पाये ॥

खाने के समय हँसे बोले और मन को स्थिर, प्रसन्न और शांत रक्खे और धीरे धीरे भोजन करे ॥

ग्रास छोटे छोटे खाय और खूब चुबलाय पर मुहँ बहुत न फैलाये न चुबलाने की आवाज़ आये ॥

खाना जितना ज्यादः चुबलाया जायगा उतनाही पचेगा और गुण करेगा ॥

खाने के साथ बेर बेर जल न पिये, और पिये भी तो थोड़ा, और भोजन के मध्य या अंत में घंटे भर बाद जल पिये तो आहार जल्दी पचता है ॥

पानी एक सांस में न पिया करे और हर सांस में पीकर पानी नाक से अलग हटा दिया करे, और चलके आकर, पाखाने से आके, पसीना जब निकलता हो, लेटे हुये, कभी न पीये ॥

अजीर्ण हो तो पानी कई बार थोड़ा २ करके पिये और बाइं करवट लेटे ॥

भोजन करके पाव घंटे तक कुछ काम न कर शरीर को थोड़ा विश्राम दे ॥

बैठना ।

बैठने में पेट के बल, या घुटनों पर कुहनी टेक के, अथवा किसी किसी प्रकार अंग टेढ़ा करके, कभी न बैठे, इस से भी शक्ति कम होजाती है, सीधा और तन के बैठना अच्छा होता है ॥

दर्वाजे या खिड़की से, चाहे बन्द भी हों पीठ लगा के बैठना या

खड़े होना भी बुरा है, क्योंकि, हवा का एक छोटा झकोरा भी सीधा पीठ पर लगने से सर्दी होजाने का डर रहता है. दोनों कंधों के बीच का पिछला अंग ठंढ से बहुत बचाना चाहिये क्योंकि उसी जगह फेफड़े शरीर से संयुक्त हैं और हवा के सीधे झकोरे से तुरतही लोहू ठंढा होजाता है कदाचित इस भांति सर्दी पहुंचे तो कंधे और छाती को सांझ सवेरे गर्म जल से सेकना गुण करता है ॥

सोना।

शरीर को नीरोग रखने के वास्ते पूरी नींद सोना भी बहुत ही जरूरी है इस लिए रात में बहुत न जागे कम से कम ६ घंटे जरुर सोये ॥

सोने का कमरा साफ हवादार, और मकान दुमंजिला तिमंजिला हो, तो जहां तक होसके ऊपर का दर्जा हो, और उस में बहुत सा असवाब, विशेष कर खाने की चीजें और आग व लम्प भी न रक्खे, न कोई नंगी, निंदित, भयानक, या भोंड़ी तसवीर या खिलोने रक्खे ॥

सोने जाने से पहले थोड़ा टहल ले और पैर भी धोकर अच्छी तरह से पोछ डाले. गीले पांव कभी न सोये, न सोते समय कोई ठोस पदार्थ खाये और न मन में किसी तरह का क्लेश लाये, प्रसन्न चित्त होके सोये और ईश्वर का चिन्तन करले ॥

सोने में सिरहाना उत्तर दिशा न रक्खे और ठंड के सबब खिड़की, किवाड़ बंद करे, तो थोड़ा सा हवा के लावकाश निमित्त खुला रहने दे, जिसमें कमरे के अन्दर की गंदी हवा बराबर बाहर निकल जाये और बाहर की ताजी हवा भीतर आये, नहीं तो हवा का निकास रुकने से बहुत ही विकार होगो, क्याकि श्वास के

द्वारा जो पवन शरीर के अंदर होके आती है, उस में विष होता है और निकास न पाने से वही बारंबार भीतर जाता है॥

ताजी हवा न पाने से शरीर का पसीना भी सड़ता है, फेफड़े कमजोर होजाते और देह निर्बल पड़ जाती है॥

सोने में मुहँ भी न ढांपे, और सिर भी खुला रक्खे, पर पलंग को हवा के झिकोरों की सीध से बचाये रहे॥

स्वास नासिका की ओर से ले,क्योंकि इस रास्ते हवा फेफड़े में गर्म होके पहुंचती है और मुहँ से श्वास लेते में ठंढी हवा जाती और विकार करती है॥

शरीर टेढ़ा मेढ़ा करके भी न सोये, और ओढ़ना बिछौना साफ़ और तकिये मुलायम रक्खे॥

अपने पलंग पर किसी को साथ न सुलाये, इसकी मनाही वैद्यक और धर्मशास्त्र दोनों में है, यहां तक कि स्त्री और पुरुष भी एकही बिस्तर पर साथ न सोयें, जैसा

मनुस्मृति का यह वाक्य है, कि

"समान शयने चैव न शयीत तया सह"

अर्थात् एकही शय्या पर स्त्रीसहित न सोये॥

सोने का समय भी बांध रक्खे, और जहां तक होसके दश बजे रात को सोये और चार बजे सबेरे उठे। बहुत सोना नुकसान और प्रभात समय उठना बड़ा गुण करता है, शरीर इस से निरोग रहता देह को बल पहुंचता, बुद्धि प्रबल होती और उत्साह बढ़ता है, किसी कवि का भी वचन है कि

सदा रैन को सोय के जो जागे बड़ भोर।

नासे रोग शरीर से गहे ज्ञान का डोर॥

आंख खुलतेही उठ बैठे फिर झपकी न ले, न पड़ा अंगड़ाइयां ले तुरत खड़ी होजाय, इस भांति थोड़े दिनों में बान पड जायगी अंत में शरीर को अत्यन्त सुख मिलेगा॥

घर

स्वास्थ अर्थात् तन्दुरुस्ती रखने के वास्ते रहने का घर भी ऐसा होना चाहिये जो गढ़ैयों और नालों पर न हो, और न ऐसी जगह जहां सील और हवा खराब हो। ऊंची कुर्सी, और ऊंची छत हो, हवा चारों ओर से आती और धूप भी पहूंचती हो। छत और दीवारों में ऊंचे और बड़े २ व्याले हों, जिस में गंदी हवा ऊपर को निकल जाय। नाब्दान और मुहरियां भी बंद न हों संडास और मोहरी के पास पानी पीने का कूआं न हो। इनके मेल से कुयें का पानी विष के समान होजाता है। घर में जगह भी इतनी हो, जिसमें अन्न पानी धरने, असबाब रखने, रसोई बनाने का ठौर हो और जो मनुष्य हों सबके सोने बैठने का अलग अलग ठिकाना हो, यह नहीं कि एक एक कोठरी में चार चार भरें और उसी में घड़े, मटके भी धरे हों। इस तरह से रहने में स्वास्थ्य अच्छा नहीं रह सक्ता, बहुत से विकार उत्पन्न होजाते हैं और बहू बेटिया की लज्जा भी जाती रहती है॥

जिस घर में रहे उसको अच्छी तरह से साफ और सुथरा रक्खे, प्रातःकाल जितने दर्वाजे और खिड़कियां हों सब रोज़ खोल दे जिसमें उस समय की पवन भीतर प्रवेश करे और धूप आवे क्ये,कि यह विकारों को दूर और रोगा को नाश करती है॥

सारा घर रोज सबेरे सांझ अच्छी प्रकार बहारा जाय, छत और दीवारों में जाले लगने न पावें, कोने दर्वाजे, खिड़की झरोखे, सब

नित्य झाडे और पोछे जांय, कूड़ा करकट गली में फेंका या मोहरी पर उनका ढेर न लगाया जाय क्योंकि इस से हवा बिगड़ती है। सूखी वस्तु जला दी जावें और गीले सड़े छिलके इत्यादि, तुरत उठा लेजाने वाला न हो तो एक मटके में डाल के मुहँ उसका बन्द करा रक्खे और जब भंगी आवे उठवा दे, आंगन, मुहरी, पाखाना रोज धुलवाये और कीचड़ घर में रहने न पाय, क्योंकि इस से ज्वर पैदा होता है॥

बदबू फैलने की रोक और सफाई के वास्ते पेशाब पाखाने की मोहरी और खुड्डियों में भी गच्छकारी के बदले पक्की ईंटें जमवा दे और पाखाने की खुड्डियों में रोज राख छुड़वाये, जिस खुड्डी पर पाखाना फिरे उसी पर अबदस्त न ले, उसके पास एक दम्भ्वा इस काम के वास्ते खाली रक्खे और उस पर जाके शौच, भंगी देर से आता हो तो मले पर थोड़ी सूखी मट्टी छुड़वादे जिसमें दुर्गन्ध न फैले और एक हांडी में थोड़ा कोयला भी पाखाने में रखवादे कि वह भी बदबू को खींच लेता और बुरी हवा को फैलने नहीं देता है॥

पाखाने का मैला पानी भी बहने न पावे, एक नांद गड़वा दे जिसमें जो पानी हो उसी में गिरे, और वह दोनों वक्त उलची और धोई जाय॥

कुएँ के पास भी मैला पानी न बहे, न कीचड़ रहे, और पानी पीने के घड़े जहां रक्खे जाते हों, उनके पास या तले भी मैली मुहरी न बहती हो॥

नहाने का घर भी साफ़ रहे और स्नान के बाद खिड़की किवाड़ जो उसमें हों खोल दिये जावें, जिसमें हवा और धूप से सूख जांय, सील रहने न पावे॥

घर के अन्दर गाय, भैंस, बकरी इत्यादि बांधना भी अच्छा नहीं पर जो अलग ठौर न हो, तो गोबर और लीद इकट्ठा न होने पाये, और जहां वह बांधी जाय, वह जगह नित्य धोई और साफ रक्खी जाय।

रसोई का ठौर भिनभिना न रहे, न कोई मैली और ग्लानि की चीज, या मुहरी पाखाना उसके पास हो॥

मकान में छठे महीने सपेदी कराये, और जा सामर्थ से बाहर, या कच्चा घर हो, तो सातवें दिन पिंडोल से लिपादे॥

इस रीति से जो रहते और बर्तते हैं, रोग उनके पास फटकने नहीं पाता क्योंकि वीर्य्य और बल का नष्ट न करना, संतुष्ट, शांत, प्रसन्न और सुथरा रहना, चलना, फिरना और परिश्रम करना विमल पवन का लेना, निर्मल जल पीना, विधि से नहाना, क्रम से खाना, क्रम से सोना, सबेरे उठना और घर को स्वच्छ और पवनीक रखना, ये सब प्रकृति की बनाई औषधि हैं, इन सबके साधने से प्रति दिन शरीर पुष्ट होता, मन प्रसन्न रहता, बुद्धि बढ़ती और आयु दीर्घ होती है पर इससे विपरीत चलना, अर्थात् रोग भोग में लगे रहना, आलस्य को बढ़ाना, काम धन्धा न करना, हर दम कुढ़ना, क्रोध और चिन्ता रखना, चित्त और देह से मलिन रहना, बहुत खाना, बहुत सोना, बहुत जागना, मैला घर और मैला आदत रखना, रोग तथा मृत्यु को बुलाना है॥

इस पर बहुत सी स्त्रियां यह अनर्थ भी करती हैं कि कोई रोग होजाता है तो जब तक वह शरीर को तोड़ नहीं देता बराबर छिपाती और दवा खाने से भागती हैं, और फल इसका यह पाती हैं कि महीनों भोगती हैं और उमर भर को बेकाम हो बैठती हैं॥

रोग थोड़ा भी हो तो भी उसको महा वैरी समझना चाहिये, उसे छिपाना और घर करने देना अच्छा नहीं ज्योंही उत्पन्न हो तुरंत

चिकित्सक को बुलावे, सारा हाल उससे कहे, और जो वह परहेज बतलावे करे. और कैसी ही कड़वी या स्वाद की बुरी दवाई दे जरूर खाये ॥

बाज़ी स्त्रियां वहमी और दवा खाने की ऐसी गुदिया होती हैं कि बिना कारण भी दवाई ढूंढ़ा करती हैं, जो जिसने बताया, खा लेतीं और जरा से कब्ज में भी मेदे को अत्तार की दुकान बना देती हैं ॥

ये लक्षण भी बहुतही बुरे हैं, बिना प्रयोजन और उस पर भी ऐसी वैसी दवा खाना मनो रोग को बुलाना और शरीर में घुन लगाना है. आये दिन दवाई खाने से पेट और आंतों की नली बिगड़ जाती और वहम करते २ अंत में सचमुच रोग पैदा होजाता है, इस लिये ऐसी आदत कभी न करे, गिरानी मालूम हो, या कोठे में मल रुक जाऊ. तो रात को सोते समय गर्म दूध मीठा मिल के, या जब सवेरे सोकर उठे, एक गिलास ठंढा जल पीले, या ज्यादः जरूरत हो तो गुनगुने जल में साबुन मिला के पिचकारी लेले, लाल गेहूं के मोटे और बेछने आटे की रोटी खाये, हेर फेर के आहार करे ॥

तीसरा वकार अर्थात् वचन और बोलने की रीति है ॥

बोल चाल एक ऐसी चीज है जो सब से पहिले देखी जाती है और इसी से गुण अवगुण की परीक्षा होती है। जिन का बोल शुद्ध, सत्य, कोमल और मधुर होता है, जगत में उनकी सराहना होती और मान बढ़ता है, और जो जबान की फूहड़ व मिथ्यावादी हैं उन को घर बाहर सब जगह अपमान उठाना पड़ता है।

किसी कवि ने बहुत ठीक कहा है कि

" वचन मूल जग को व्यवहार।
स्वर्ग नर्क सुख दुख संसार,,

शास्त्र लिखता है कि

नास्ति सत्य समो धर्मो न सत्याद्विद्यते परं।

नहि तीव्रतरं किञ्चदनृतादिह विद्यते ॥

अर्थ—सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं, न इससे बढ़कर कोई पदार्थ है और न मिथ्या से बुरी दूसरी वस्तु है ॥

सत्यमेव व्रतं यस्य दया दीनेषु सर्वदा।

कामक्रोध वशे यस्यं तेन लोकत्रयं जितं ॥

अर्थ-जो सत्य का व्रत, दीन पर दया करते और काम क्रोध वश रखते हैं वही तीनो लोक जीतलेते हैं ॥

और बात चीत करने की रीति यह लिखी है कि

"प्रियं तथ्यंच पथ्यंच वूब्रे धर्मार्थमेव च।

अशद्धेयमसत्यं च परोदं कटु चोत्सृजेत् ॥

प्रिय; यथार्थ, धर्म और अर्थ संयुक्त बोले, ऐसी बात जो मिथ्या हो जिस पर कोई विश्वास न लावे, जो दूसरे को बुरी लगे कभी मुहँ से न निकाले न पीठ पीछे किसी को बुरा कहे ॥

"सत्यं मृदुं प्रियं वाक्यं धीरो हितकरं वदेत्

आत्मोत्कर्षं तथा निन्दां परेषां परिवर्जयेत् ॥

सदा सत्य, कोमल, मधुर और हित की बात कहे, अपनी प्रशंसा और पराई निन्दा न करे ॥

मनुस्मृति में भी यही शिक्षा की है कि

"वाक्चैव मधुराश्लक्ष्णा प्रयोज्या धर्ममिच्छता,

जिसको धर्म की इच्छा हो वह सर्वदा मीठा बोलें और अच्छी बात कहे ॥

और झूठ बोलने पर लिखा है कि

"वाच्यर्था नियतास्सर्वे वाङ्मूला वाग्विनिः स्मृताः।

तान्तु यः स्तेनयेद्वाचं स सर्वस्तेय कृन्नरः ॥

अर्थ—जितने अर्थ हैं सब वाणी से समझे जाते, उसी में सब रहते और उसी से निकलते हैं, जिसने वाणी को चुराया, अर्थात् झूठ बोला या बात को छिपाया वह सब चीज का चोर है ॥

इस लिये चाहिये कि सब से सच और मधुर बोले, किसी को रूखी फीकी कड़वी और ऐसी बात कभी न कहे जिस से उसके हृदय में चोट लगे और उद्वेग उत्पन्न हो ॥

जो कुछ कहे पहिले अच्छी तरह सोच विचार ले, यह नहीं कि जो मुहं में आये बकदे, बिना समझे बूझे बक उठने से हँसी और हानि भी होती, बात भी जाती और पछताना पड़ता है ॥

किसी की बात न काटे, जब दो मनुष्य आपस में वार्ता करते हों उनके बीच में बोल न उठे, और जिस बात को जानती न हो उस में कभी तर्क न दे, कि ये सब मूर्खता के लक्षण हैं ॥

चिल्ला के बोलना, बहुत बातें बनाना और व्यर्थ बकना भी स्त्रियों को दूषित करता है और धर्म शास्त्र में तो ऐसी औरतों के साथ विवाह करना भी मना लिखा है।

स्त्रियों की बोली मधुर, प्रिय, धीमी और सुरीली होनी चाहिये, जिनकी बोली भारी और कड़ी होती है वह पुरुष संभाषिणी कह-लातीं और कठोर समझी जाती हैं। इस के सिवा बहुत बोलने और चिल्लाने से लज्जा भंग होती और ऐसी स्त्री चाहे नेकचलन भी हो सुनने वाले उसको दोष लगाते हैं ॥

बात चीत करने में किसी से उलझ बैठना और अपनी बात पर हठ करना भी अच्छा नहीं इसमें बात बढ़ जाती और दिलों में मैल आजाती है ॥

लुतरापन लगाई बुझाई या पीठ पीछे किसी की बुराई करना भी महा दोष है ॥

मर्दों से बेधड़क और आंख मिलाकर बात न करे । बोलने में बड़ाई छोटाई का विशेष ध्यान रक्खे। बड़ों से अधीनताई के साथ, बराबर वालियों से हंस के और छोटों से प्यार सहित, बोले । गुस्से में कोई कुछ कहे तो टाल जाय, जवाब न दे और इस उपदेश पर सदा चले कि

मधुर मनोहर सत्य युत, वचन बोलिये नित्य ।
अक्षर कम और अर्थ बहु जो नहिं होय अनित्य ॥

वस्त्र विधान ।

चौथा बकर वस्त्र है जो यत्न के साथ ऋतु, अवस्था और समय का विचार करके पहिना जाय, तो इससे शरीर की रक्षा रहती, लज्जा का प्रतिपालन होता, और रूप मर्याद की शोभा बढ़ती है ॥

परन्तु हमारे देश की स्त्रियों का जो आज कल पहिनावा है, उससे यह कोई हेतु नहीं निकलता, और विशेष कर धोती से, जिसको पूरी निर्लज्जता का जामा कहा जाय तो ठीक है, और जो पहिनी भी इस ढंग से जाती है, कि उसके वर्णन करने में लाज आती है, पर, अफ़सोस, पहिरने वालियों का दीदा ऐसा साफ़ है, कि बाप हो या भाई, ससुर हो या देवर जेठ, सबके सामने बेधड़क आधी २ टांगें नंगी और पेट खोले फिरती हैं, ज़रा भी नहीं शर्मातीं, और जिन को परमेश्वर ने कुछ धन दिया है, उनकी धोती तो महीन भी इतनी होती है, कि रोम रोम दिखाई देते हैं, और गंगा यमुना में स्नान के समय की लीला तो अपार है; शरीर और उसमें कोई भेद जानही नहीं पडता. और उस पर जो कहीं कोई टोक बैठना और कहना है, कि नहाने के समय तो मोटी धोती बांध लिया करो, और यों गले में कुरतो और नीचे तहबंद रक्खो, तो जवाब पाता है कि भारी धोती संभलती नहीं, कुरती बदन में चुभती और तहबंद गड़ता है ॥

इसी तरह जिन थिर्लो जातों में लहंगे दुपट्टे और छोटे कपड़े का पहिनावा थोड़ा बाकी है उनका लहंगा भी ऊंचा और ओछा होता, दुपट्टा देह से अलगड़ी रहता, और आस्तीनदार कुरती या सलूके की तो उनके यहां भी मानो सौगन्द है॥

फिर कपड़े पहिरने में तो यह सुकुमारी, पर ढाई सेर चांदी के कड़े पाजेब और सवा सेर छल्लों की वेड़ियां डाले, धूप हो चाहे पाला पड़े, कंकड़ चुभे या मैला भरे, नंगे पैर फिरतीं, और जूती पहिरना महादूषित और निन्दित समझती हैं, वाह रे मूर्खता, जिसने न देह की सुधि रक्खी न नंगे उघारे की लाज, स्त्री के लिये ऐसा प्रमाद किसी प्रकार अच्छा नहीं, लज्जा उसके वास्ते भूषण से भूषण है, उसमें जरा सी भी मैल आई और शोभा उसकी जाती रही, चाहे कोई भी दोष उसमें न हो, तौ भी इन चालों से कलंक लगता है, दिल में क्या है कोई नहीं जानता, बाहर की चाल ढाल सब देखते हैं, और फिर पहिरावा, इसमें तो जरासा भी दोष हुआ और हजारों ऐब लगे, कहीं, हवा से भी पल्ला उठगया और निन्दा होने लगी, इस वास्ते. हे सुन्दरियो, तुमको चाहिये कि कपड़ों की कीडा हो रहो, और सिर से नख तक अंग अंग को हजारों तह में छिपाओ, देखो कामन्दकीय नीतिसार का वाक्य है कि

"गमनं शिहूलत्वं च संज्ञानाशो विवस्त्रता,,

अर्थ—जो स्त्री इधर उधर फिरती घबराई हुई रहती अच्छी बातों को भूल जाती और अपने देह को वस्त्रों से अच्छी तरह नहीं ढांपती है वह महा निन्दित है॥

और मनुस्मृति का प्रमाण भी तुम ऊपर पढ़ चुकी हो कि जो "स्त्रियां निन्दित वस्त्र पहिनती हैं उन को मरे पर जल भी न देना चाहिये, निन्दित वस्त्र उन्हीं कपड़ों को कहते हैं जिन से अच्छी तरह सारा बदन न छिपे॥

अब वैद्यक शास्त्र का भी प्रमाण सुन लीजिये, यह कहता है कि छाती खुला रखना और कुरती शलूका इत्यादि न पहिने रहना बड़ी भारी मूर्खता है, क्योंकि दोनों हंसुलियों के बीच में जो भाग है, क्षयरोग, जिसको सिल और राजरोग भी कहते हैं, वहीं से उत्पन्न होता है और इसके सिवा अनेक दोष खड़े होजाते हैं।

इससे विदित है कि शरीर को न ढकने से पत तो उतरती ही है रोग भी घेर लेते हैं। अब रहा रूप, इसको आपही निहारिये कि आधी टांगों की धोती से भली मालूम होती हो, या जब सिर से पैर तक अच्छे २ कपड़े पहिनती हो॥

इस पर कोई धोती वाली लजा और झुंझला कर जो यह कह उठे, कि चौके में धोती बिना कैसे सरेगी तो उसका प्रमाण भी शास्त्र से सुन लीजिये कि यह आपकी पुनीत धोती अकेली वहां भी निषिद्ध है, देखिये मनुस्मृति अ० ४ श्लोक॥ ४५॥

"नान्नमद्यादेकवासा न नग्नः स्नानमाचरेत्"

अर्थात् एक वस्त्र को पहिन कर भोजन न करे न नग्न होकर नहाये॥

भविष्य पुराण के बारहवें अध्याय में ब्रह्मा जी का वचन सुनिये जो कहते हैं कि "स्त्री रसोई बनाकर चौके से बाहर निकल कर, शरीर का प्रस्वाद अर्थात् पसीना पोंछ, गन्ध, ताम्बूल, पुष्पों की माला और सुन्दर वस्त्रों से भूषित होके, पति को भोजन के निमित्त बुलावे और प्रेम के साथ जिमावे। जिस पदार्थ में उसकी अति रुचि देखे उसे परसे," अब कहिये आप की मैली कुचैली धोती का माहात्म्य क्या रहा जब स्वयं ब्रह्माजी का यह वाक्य है कि उसको पहिने हुये पति का भोजन भी न कराये, अच्छे अच्छे वस्त्रों से भूषित होके खिलाये और खाये॥

इस लिये अपनी लाज, आरोग्यता, शोभा और धर्म सब की भलाई चाहो, तो यह भोंड़ा और निर्लज्ज पहिरावा छोड़ो, ऋतु अवस्था और समय के अनुकूल सुथरे और सुन्दर वस्त्र जो जिस अंग में पहिरने चाहिये इस प्रकार से पहिनो और ओढ़ो कि कहीं से निर्लज्जता न आने पावे, न कोई हँसे या टोके, मुख पर शोभा और गंभीरता जान पड़े, और पैरों तक सारा शरीर ढकजाय। शंख स्मृति का वचन है कि स्त्री पैर के गट्टे तक नीचे कपड़े पहिने और उनके तले स्तन अपने कसे और दबाये रक्खे॥

तुमने मेमों को, उनके नाच और दरबार की पोशाक छोड़कर सामान्य लिबास में देखा होगा कि गले से पैर के नाखूनों तक कैसी ढकी मुंदी रहती और किस उत्तम प्रकार से वस्त्र पहिनती हैं कि आंधी भी चले तो भी कोई अंग उघारा होने नहीं पाता, और कपड़े उनके संगीन भी कितने होते हैं कि धूप क्या पानी भी न छन सके। अब कोई उन से पूछे जिन से मोटी धोतियां संभाले नहीं संभलतीं, कि क्या ये मेमें धनवाली नहीं हैं, जो महीन कपड़े पहिन सकें, या शरीर उनका कोमल नहीं है, जो मोटे कपड़े चुभें, ये दोनों गुण तो उनमें कहीं अधिक हैं, न तुम्हारे पास उतना धन और न तुमको उनके बराबर सुख, जो तुम उनसे ज्यादा सुकुमार बनो, हां मूर्ख वह जरूर नहीं हैं, वह समझती हैं कि कपड़े के गुण क्या हैं और क्योंकर ओढ़ना पहिरना चाहिये, और तुमको इसका ज्ञान नहीं, वह अपनी बुद्धि और शिल्प विद्या के बल से नित्य नई नई तरह की पोशाक बनाती और पहनती हैं, तुम अपनी मूर्खता और आलस्य से नई नई तरह निकालना तो दुर्लभ है, पुरानी चाल का जो पहिरावा था वह भी छोड़ बैठीं॥

इस पर तुम यह कहोगी कि मेमों का सा साया तो यहां कभी

कोई पहिनता न था, धोती जो सदा सब पहिनते आये अब भी पहिनी जाती है. तो सुनिये मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि आप भी साया पहिनिये और मेम साहब बनिये, मैंने केवल उनके सुघड और आपके फूहड पने को दिखाया है, बाकी यह मतलब नहीं है कि तुम उनकी नकल करो और न इसकी कोई जरूरत है। तुम्हारे यहां आप भांति भांति के कपडे मौजूद हैं, जिन से वही हेतु निकलता है. और उनमें से अब भी कोई कोई तुम बनाती पर पहिनती नहीं हो। देखो लग भग सब उत्तम जातियों में, विवाह के समय जामे वा चौबंदी की नाई जोड़ा, कहीं सूहा, कहीं छपा हुआ कहीं ताश, कहीं किरकिरी और कहीं सुनहले, रुपहले ठप्पों का, किसी के यहां ससुराल और कहीं मैके की ओर से बनाया. और कन्या को कहीं फेरे, कहीं भांवरें, कहीं खट्टदान, कहीं पलंग और कहीं विदाई के समय पहिराया जाता है जिस से विदित है कि वह अगले समय का पहिरावा था जो अब शकुन मात्र के लिये बनता और संदूक पिटारों में तह करके रख दिय जाता है। पंजाबी क्षत्रियों में ये जोड़े कमखाब, जरबफत, कारचोब इत्यादि भारी लागत के बनाये और बरी में सजाये जाते हैं, जनानी मिलनी वाले दिन जिसको और जातिवाले चौथी कहते हैं, बहू इसको अवश्य और जब तक छोटी रहती, त्योहारों में भी बहुधा पहिनती है ॥

ये जोड़े किसी प्रकार साये से कम नहीं और गुण भी वही रखते हैं, कि शरीर भी सारा ढक जाय और रूप भी शोभाय-मान निकल आये ॥

कश्मीर देश में अब भी स्त्रियां टखनों तक नीचा फेरन पहिनतीं और कमर में पटका बांधती हैं जो साये का पूरा काम देता है। सिन्ध की औरतें घुटनों के उपर घुटनों से नीची चौबंदी

और पंजाबिने भी घुटन्ने, घेरदार लहंगे और बड़े बड़े कुरते, पहिरती और ऊपर मोटे दुपट्टे और चादर ओढ़ती हैं ॥

अब आपही सोचिये, कि लज्जा के निवारण को ये पहिरावे अच्छे हैं, या आपकी ओछी धोती, जिस से न पेट छिपे न पीठ। भलमंसी, मर्याद और रूप की शोभा चाहती हो, तो वही अपने विवाह-और चौथी वाले जोडे निकालो, और जो कुच्ची धोती ही से मन रहती और छबि बनती हो, तो तुम जानो, परंतु कुरा कर के लम्बी, चौड़ी, संगोन और पैरों के गट्टे तक नीची बांधो, नीचे तहबंद और गले में पूरी आस्तीन की कुड़ती, कमर से नीचे शलूका और पांवों में मोजे और जूती पहिनो ॥

धन रक्षा ॥

पांचवां प्रकार विभव अर्थात् धन है जिस के विना कहा है कि

वरं वनं व्याघ्रगजेन्द्रसेवितं।
द्रुमालयः पक्वफलानि भक्षणम् ॥
तृणानि शय्या परिधान वल्कलं।
न बन्धु मध्ये धनहीन जीवनम् ॥

बन में फिरना, बाघ और हाथी के मुहँ में जाना, वृक्ष के तले निवास करना, फल खाके जीना, घास पर सोना, छाल और पत्ते लपेटना यह सब श्रेष्ठ है पर निरधन होके बन्धुवों में रहना अच्छा नहीं ॥

क्योंकि धन न होने से कोई बात नहीं पूछता थोडी थोडी चीज़ के वास्ते सब के आगे हाथ पसारना और घिघियाना पड़ना और अंत को यह फल होता है कि

दारिद्र्यात् ह्रियमेति ह्रीपरिगतः प्रभ्रश्यते तेजसो।
निस्तेजाः परिभूयते परिभवान्निर्वेदमापद्यते ॥

निर्विन्नः शुचमेति शोकपिहितो बुद्ध्या परित्यज्यते ।
निर्बुद्धि क्षयमेत्यहो निधनता सर्वापदामास्पदम् ॥

दरिद्रता से खिसियाना पड़ता है खिसियाना होने से तेज ताजा रहता, तेज न रहने से निरादर होता, निरादर से दुःख बढ़ता, दुःख से शोक होता, शोक से बुद्धि जाती रहती और बुधि न रहने नाश होजाता है ॥

इसी वास्ते कहा है कि

जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो गच्छतात् ।
शीलं शैलतटात् पतन्त्वभिजनः संदह्यतां वह्निना ॥
शौर्य्ये वैरिणि वज्रमाशुनिपतन्त्वर्थोऽस्तु न केवलं ॥
येन केन विना गुणास्तृणवत् प्रायाः समस्ता इमे ॥

अर्थात् जाति रसातल को चली जाय, गुण भी नष्ट होजाय, शील भी जाता रहे, परिवार भी भस्म हो जाय, शूरता भी न रहे, धन अकेला बचजाय, क्योंकि इस के बिना कितने ही गुण हों तिनके से भी तुच्छ समझे जाते हैं ॥

धन से बढ़ कर कर संसार में दूसारा हितकारक पदार्थ नहीं, यह पराधीन होने नहीं देता, सारे दोष छिपाता और लोक परलोक दोनों बनाता है ॥

धननाकुलीनाः कुलीना भवन्ति ।
धनैरापदो मानवा दुस्तरन्ति ॥
धनेभ्यो न किञ्चित् सुहृद् वर्ततेऽन्यो ।
धनान्यर्जयध्वं धनान्यर्जयध्वम् ॥

धन के होने से अकुलीन भी कुलीन होजाता और इसी की सहायता से मनुष्य विपत्ति से भी पार होता है, धन से अधिक कोई हित नहीं इस लिये धन बटोरो बटोरो ॥

पर यह धन किसी को यों नहीं मिलता है उद्यम करने से हाथ

आता और कौड़ी २ जोड़ने से इकट्ठा होता है, कमाना पुरुष का काम और धरना उठाना स्त्री का अधिकार है और यही मनुस्मृति में भी आज्ञा है कि

अर्थस्य संग्रहे चनाव्यये चैव नियोजयेत् ॥

अर्थात् धनका जमा करना और खर्च का उठाना स्त्री के अधिकार में रहे, और यह उसका काम है कि

" सु संस्कृतोपस्कारया व्ययेचामुक्तहस्तया,,

घर की चीज वस्तु संभाल के रक्खे और हाथ रोक के खर्च करे ॥

इस लिये सज्जन स्त्रियो अवश्य है, कि चादर देख कर पैर फलावें, वृथा एक कौड़ी भी न उठावें, सावधानी के साथ सब चीजों को आप देखें, दूसरों के भरोसे न छोड़ें। जिस वस्तु को बिगड़ते पावें, तुरत सँभाले, अन्न आदि सब हिसाब से इकट्ठा मँगावे रुपये, पैसे का हिसाब लिखती जावे, किसी महीने में कोई खर्च ज्यादा पड़जाय तो कसर उसकी दूसरे महीनों में थोड़ी थोड़ी करके निकाल ले, जो आमदनी हो उसके तीन भाग करे, एक समय कुसमय के वास्ते रक्खे, दूसरा व्यवहार में लगाये, और तीसरे में नित्य का खर्च चलाये, और जो आमदनी खर्च से अधिक न हो, तो भी पैसा दो पैसा जो होसके जरूर बचाये और जहां तक बने खर्च को तोड़े रहे। जो काम आप करसक्ती हैं, उसमें पैसा न गवायें, जैसे कपड़ा कुछ जरूर नहीं कि दर्जी से सिलायें, जनाने मरदाने सब आप सीलें और दर्जी की सिलाई बचायें, मोजे दस्ताने, गुलूबंद, रूमाल, टोपियां इत्यादि आपही बनायें, बाजार से कभी न मंगाये, अपना कपड़ा और गहना संभाल के पहने, जिसमें जल्दी फटने, टूटने घिसने और मैला होने न पाये; गृहस्थी के धन्धे करने के समय भारी जोड़े और गहने पहिरे न रहा करें, क्योंकि इस से वह नष्टरूप होजाते और घिसते भी हैं, इस

के सिवा गहना शृङ्गार की वस्तु है और उसी के समय इसके पहिरने की शोभा है, यों हरदम लादे रहने से सिवा हानि के कोई लाभ नहीं और न शरीर को सुख, बल्कि देह तो और मैलाहो जाता है। विश्वास न आवे तो जरा अपने हाथ पर निहार लीजिये कि कड़े छड़े इत्यादि की कालख कितनी जमी हुई है ॥

सन्तान उत्पत्ति और दश संस्कार।

अब स्त्रियों का जो मुख्य फल सन्तान उत्पत्ति और जन्म से विवाह तक मनुष्यों के जो दश संस्कार हैं उनका वर्णन किया जाता है ॥

संस्कार दशों ये हैं गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त, जाति कर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन और विवाह ॥

सब से पहिला संस्कार गर्भाधान है, उसके विधान से प्रथम जिस तरह अन्नादि बोने के निमित्त खेत का बल और बीज की उत्तमता देखी जाती है, उसी भांति शास्त्र में लिखा है

(देखो मनुस्मृति अ.९ श्लो. ३३)

"क्षेत्रभूतः स्मृतानारी बीजभूतः स्मृतः पुमान्,,

स्त्री को खेत और पुरुष को बीज रूप समझ के दोनों का बल और वय (अवस्था) विचारना और यह देख लेना आवश्यक है कि स्त्री रोगों से रहित, अच्छी तरह से तरुण (जवान) और गर्भ के पोषण में पूरी सामर्थ्यवती होचुकी, और पुरुष भी आरोग्य है और बल का पुष्ट, क्योंकि जिस तरह पृथ्वी और बीज के दोष से अन्न अच्छा पैदा नहीं होता उसी तरह इन दोनों का बल और वय ठीक न होने से सन्तान, शरीर और आयु की क्षीण उत्पन्न होती है, और जो दोनों बल के पोढ़े होते हैं, तो मनुस्मृति का प्रमाण है

"उभयन्तु समं यत्रा सा प्रसूतिः प्रशस्यते,,

अति उत्तम और प्रशंसित औलाद पैदा होती है ॥

वैद्यक शास्त्र लिखता है कि १६ वर्ष से कम अवस्था तक स्त्री के तल पेट के हाड़ पूरे भर नहीं पाते, न प्रसूति के योग्य उसका गर्भाशय बन पाता है, और जब तक देह के हाड अच्छे दृढ़ न होजाय और तल, पेट, मज्जा, तंतु और अस्थिबन्धन से पक्का न होले तब तक बहुत से उपद्रव पैदा होजाते और स्त्री को बालक उत्पत्ति में बड़ा भारी कष्ट होता है, इसी तरह २५ वर्ष से कमसिन मर्द का वीर्य भी लिखा है कि निर्बल रहता और उत्तम नहीं होता है

पंचविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे।
समत्वो गतवीर्यौ तौ जानीयात् कुशलोभिषक॥

अर्थ, पच्चीस वर्ष पुरुष और सोलह साल की स्त्री हो तब दोनों का बल और वीर्य बराबर होता है॥

ऊनषोड़श वर्षायाम प्राप्तः पञ्चविंशतिम।
यद्या धत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते॥

अर्थ—सोलह वर्ष से न्यून स्त्री और पच्चीस साल से कम अवस्था का पुरुष होने से गर्भ विगड जाता है॥

जातो वा न चिरंजीवेज्जीवद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥

अर्थ—और जो बच्चा पैदा भी होता है तो जीता नहीं और जिया भी तो शरीर से दुर्बल और इंद्रियों का कमजोर रहता है, इस लिये १६ वर्ष से छोटी औरत से कभी गर्भाधान करना नहीं चाहिये॥

इस के सिवा दूसरी योग्यता यह भी देखनी चाहिये कि संतान के पालन पोषण शिक्षा इत्यादि की सामर्थ्य है या नहीं, क्योंकि इसके बिना परिवार बढ़ाना मानो घोर दुःख और दरिद्रता को बुलाना है संतान का सुख तबही प्राप्त होता है, जब धन धान्य से परिपूर्णता हो, खाने का ठिकाना नहीं और बच्चे जनमते जांय इसमें कोई हर्ज

नहीं होता, नरक का दुःख सहा जा सकता है, पर बच्चों को भूखों मरते देखा नहीं जाता, इसी वास्ते भविष्य पुराण में निर्धन को गृहस्थाश्रम स्वीकार करना निषिद्ध किया और लिखा है कि पहिले धन संपादन करे पीछे विवाह करे ॥

गर्भाधान विधि ॥

जब सब प्रकार से स्त्री और पुरुष दोनों सामर्थ्य पा जांय, तब गर्भाधान का विधान इस रीति से किया जाय कि ऋतुकाल में (जो रजोदर्शन से १६ दिवस रहता है और उन में चार पहिले और ग्यारहवां और तेरहवां दो बीच के नष्ट और वर्जित हैं) जिस दिन स्त्री अच्छी तरह से शुद्ध हो जाय और रजरोग का लेश भी बाकी न रहे, और न अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, वा पूर्णमासी तिथि हों, स्नान करके दोनों विधिपर्वक सुगन्धादि पदार्थों से हवन पूजन और भी जो कुल रीति हो दिन में करें, और रात्रि समय सुन्दर और सुथरे स्थान में जहां कोई मैली और बुरी वस्तु, भयानक और निन्दित तसवीर या भोंड़े खिलौने इत्यादि कुछ न हों, न उस रात में मेह या बादल और न दोनों में से किसी के शरीर में जरासा भी खेद या किसी प्रकार की चिन्ता और क्लेश न हो और न कोई नशा खाया हो, पहर रात्रि गये पीछे ऋतुदान दें। और उस समय मन अपना दोनों शुद्ध, शांत और अत्यन्त प्रसन्न रक्खें और परस्पर प्रेम में चूर रहें, क्योंकि उस वक्त दोनों की जैसी अवस्था होगी, उसी के अनुकूल बच्चे का शरीर स्वभाव, पुरुषार्थ और बल बनेगा। कहावत चली आती है "जैसा बोवोगे वैसा लुनोगे" आप दुखी होंगे, तो बालक भी अवश्य ही दुखी उत्पन्न होगा ॥

गर्भरक्षा।

गर्भस्थिति होजाने पर उसकी रक्षा के लिये ऐसे आचार रखने चाहिएं, जिसमें स्त्री आप भी सुखी रहे और बालक निरोग, निर्दोष,

सुन्दर, बलवान्, बुद्धिमान, विद्वान, यशस्वी और प्रतापी उत्पन्न हो॥

रक्षा के हेतु, अवश्य है कि गर्भिणी अपने शरीर का अच्छी तरह से यत्न करे, गर्मी और सर्दी दोनों से बचाये रहे, दुर्गन्ध के पास न खड़ी हो और न कोई कड़ी सुगन्ध सूंघे, साफ और सुथरी रहे, नित्य ठंढे जल से नहाये, गला, मुख, छाती सब खूब मलकर धोये, गीले कपड़े न पहिने, न चुस्त और तंग, कमर भी बहुत न कसे, न पेट दबने दे, क्योंकि इस से जनन शक्ति में हानि और गर्भपात का डर रहता है॥

धूल, मट्टी पत्थर काठ, वा और किसी प्रकार के कड़े आसन पर कभी न बैठे और न विश्राम करे, घुटने टेक कर न बैठे, न कोइले, ठीकरे, ढेले, या नाखून से जमीन खुचें, या लकीरें बनावे, बाल भी सिर के बिखरे न रक्खे, न भूत प्रेत की कहानियां सुने, सूने घर में या वृक्ष के तले भी न रहे, न मरघट पर जाय, गढ़हे और कुयें भी न झांके और न दूर की चीज पर टकटकी लगाय।

चटक और दौड़ के न चले, कोठों पर सँभल के चढ़े उतरे, कूद फांद न करे, भुजा अपनी ऊंची न ताने, न भारी चीज उठाये, चिल्ला के न बोले और न जोर से हँसे।

न बहुत जागे न बहुत सोये, सबेरे सोये और सबेरे उठे, दिन में भी एक दो घंटे लेट रहे, बिछौना मैला और बहुत गुदगुदा भी न रक्खे, ओढना साफ और सोने का स्थान भी सुथरा रक्खे, पवन अवकाश के निमित्त रात को खिड़की केवाड़ थोड़े खुले रहने दे, और पति से न्यारी और पैर धो के सोया करे।

आहार में रूखा, सूखा, बासी पकान और भारी खाने जो पेट में चुभें और जल्दी हजम न होये, या वात पित्त और अग्नि को बढ़ायें, वा कफ पदा करें, कभी न खाय, हलका और पुष्ट भोजन

करे। मांस खाना हो तो उस में ठंडी तर्कारी या साग बुड़या दे। रात्रि में खाना कम खाय, थोड़ा दूध एक उवाल देकर चीनी मिला के पी लिया करे। और भोजन करने के पिछे पांच सात मीठे बदाम और माशे भर सौंफ, भूसी निकाल और साफ करके, खा लिया करे, इस से वायु दबती, खाना जल्दी पचता और बहुत गुण होता है।

प्रथम कुछ दिनों थोड़ा अहार करे, जब गर्भ अधिक दिन का होजाय और फड़कने लगे, तब आहार बढ़ा दे और उलट पलट कर खाया करे, सदा एकही पदार्थ न खाये, शरीर में रुधिर ज्यादा हो तो आहार घटा दे, क्योंकि खून अधिक होने से गर्भपात होजाता है, और कम हो तो पिछले तीन चार महीनों में पुष्ट चीजें खाय और बल को बढ़ावे।

बहुधा स्त्रियां ऐसी अवस्था में अब तब जो जी में आता खालेती हैं। विकारिक वस्तुओं का खाना अच्छा नहीं, जहां तक हो सके उनपर इच्छा न चलाये, और किसी प्रकार जी न माने, तो बहुत ही थोड़ा खाय। मन को रोकने से पेट के बच्चे की भी मन मारने की प्रकृति पड़ती है, और दोनों अवगुण से भी बचते हैं। वैद्यक में लिखा है कि बादी चीजों के खाने और बहुत आहार करने से बच्चा कुबड़ा, अंधा, गूंगा, और ठिगना, पैदा होता और पित्त बढ़ाने वाली वस्तु को खाने से, गंजा होने का डर रहता, और कफ कारक पदार्थों से रंग उसका पीला पड़जाता है, और मदिरा पीना या और कोई नशा खाना भी निषिद्ध लिखा है॥

गर्भिणी के सामने कोई ऐसी वस्तु, जो मिल न सकती हो, या जो विकार करे, कभी न लाये और न उसकी चर्चा करे, क्योंकि उसका मन चला, और वह न मिली तो गर्भपात या बच्चे के अंग भंग हो

जाने का बड़ा भय रहता है, और जो कदाचित किसी ऐसी चीज पर उसका मन चले, जो तुरत न मिले तो एक गिलास ठंढा जल पिला दे।

गर्भिणी व्रत और उपवास भी न करे, न कहीं लम्बी यात्रा में जाय, रेलगाड़ी पर भी बहुत न चढ़े और अपनी सवारी की गाड़ी को तेज हांकने, और पालकी वा डोली के कहारों को भी चटक चलने न दे ॥

आलसी भी न बन बैठे, घर के काम धंधे किये जाय, क्योंकि श्रम न करने से कोठा अशुद्ध और शरीर शिथिल होजाता है, पेट का बच्चा निर्बल होता और स्त्री को जाये में ठंडी पीरें आती हैं, पर हां बहुत भारी परिश्रम न करे, न रात में देर तक सीये परोये, क्योंकि इस से भी बच्चे को अवगुण पहुंचता है, उसकी छाती तंग होजाती और रतौंधी हो जाने का डर रहता है ॥

गर्भिणी को उचित है कि क्रम से सब काम करे; क्रम से खाय, क्रम से सोये, क्रम से धन्धे करे, शरीर को थोडा आराम दे और मन को बहलाये और रोग व उत्पात से बचाये रहे ॥

दैव संयोग से जो औषधि खाने का प्रयोजन पड़े तो बहुत कड़ी दवा न खाय, कोठे में मल भर जाय तो थोडा अंडी का तेल पी ले, स्वाद से उसके डरती हो तो आधा गिलास ताजा दूध एक उबाल दिया हुआ और गुनगुना ले और उस में तेल इस युक्ति से छोड़े कि गिलास के बीच में पड़े, कोनों से छू न जाय और तुरत एक सांस में पीले ॥

दूसरी औषधि यह भी है, दो तोले दाख और एक तोले गुलाब के फूल और दो तोले अंजीर की चटनी या गोली बना रक्खे और तीसरे चौथे दिन एक सुपारी के अनुमान या प्रयोजन हो तो अधिक भी, बडे सवेरे या रात में सोते समय खा ले।

पके अंगूर और भूने सेब भी कब्ज़ दूर करते हैं और लाल गेहूं के मोटे आटे की रोटी राब या कच्ची खांड वा छोटे चमचे भर शहत के साथ खाने या गौ का दूध कच्ची शक्कर मिला के पीने से भी मल शुद्ध रहता है ॥

एक और उत्तम उपाय यह भी है कि जब जरूरत हो, एक पाव से आध सेर तक गुनगुने जल की पिचकारी लेले, परंतु यह नित्य न करे ॥

उबकाई और मचली आती हो तो कागजी नीम्बू का रस और चीनी,थोड़े पानी में मिला के पीने या बरफ के खाने से भी वह जाती रहती है, और जो इस से बंद न हो, तो राई पानी में पीस कर कपड़े पर लगा के मेदे के ऊपर अर्थात् कौडी के नीचे चिपका दे और पाव घंटे पीछे जब चरमराहट होने लगे छुडा डाले ॥

चिरायता भी बडा गुणदायक है,उसको ६ या ७ माशे पाव सवा पाव पानी में आधे घंटे तक भिगो दे, फिर छान के बोतल में भर रक्खे और आधी छटांक सांझ को पी लिया करे। दांतों में दर्द हो तो दालचीनी या लौंग का तेल रुई की फरहरी से जहां दर्द हो लगा दे और जो दांत खुखले हों, तो रुई तेल में भिगो के खुखले दांत में रखदे, और जो इस से दर्द न जाय तो बाबूना और पोस्ते की बुड्डी पानी में औट कर उससे सेंके ॥

खांसी आती हो तो तवे पर मदार के आठ या सात पत्ते इतना भूने की काले होजांय सफेद न रहने पायें और न हरे रह जांय, फिर उनको ६ माशे ग्वारी नमक के साथ खरल करे और शीशी में भर रक्खे, जब खांसी उठे एक या दो चुटकी बँगले पान में देकर मुंह में रक्खे और धीरे धीरे अर्क उसका चूसे ॥

इसी तरह से जब जो दुःख हो साधारण इलाज करे, और

आठवें मास में बड़ी ही चौकसी रक्खे, परिश्रम कोई न करे, आहार भी बहुत हलका, सूक्ष्म और थोड़ा खाय, नवें महीने किसी प्रकार का बोझा न उठाये, न बहुत बैठे, न झुके और न करवट लेटे, चला ज्यादा करे पर ऊपर की तरफ बहुत और नीचे की ओर कम, जब थोड़े दिन रह जायँ तो सात दाने अंजीर रोज़ खाया करे और कभी कभी जरासा सहत भी चाट ले॥

बालक के सुन्दर और निर्दोष उत्पन्न
होने का उपाय॥

यह सब तो गर्भरक्षा के उपाय हुये अब यह यत्न सोचने चाहिये जिनसे संतान निर्दोष, रूपवान, और गुणवान उत्पन्न हो, नहीं तो बालक हुआ और जीया भी तो किस काम का॥

यत्न के नाम पर बहुतेरी स्त्रियां आश्चर्य करेंगी कि अच्छा और बुरा होना तो भाग्य अधीन और कर्त्ता के हाथ है, यत्न क्या बना सकता और हम कर भी क्या सकते हैं॥

विधाता निःसंदेह मालिक है. और अच्छे बुरे गुण क्या जन्म भी तो वही देता है, पर जिस भांति उसने अपनी अद्भुत रचना से प्रजा उत्पत्ति के निमित्त स्त्री को सांचा बनाया है उसी तरह सुघड़ और असुघड़ बच्चा निकालना भी उस सांचे के बश रक्खा है, अर्थात् जैसे अच्छे बुरे सांचे में अच्छे बुरे खिलौने ढलते हैं, वैसे ही अच्छी बुरी औलाद पैदा होती है, और युक्ति इस में यह रक्खी है कि गर्भिणी के मन और चेष्टा का प्रतिबिम्ब (परछाईं) बच्चे के आकार पर पड़ता है, जो विचार उसके मन में उठते और जिस विषय में उसका ध्यान विशेष रहता है, उसी के अनुकूल बच्चे की सृष्टि होती और वैसी ही प्रकृति और स्वभाव उसका बनता है॥

यहां पर समझने के निमित्त एक बड़े वैद्य के रचे ग्रन्थ से एक दृष्टांत नीचे लिखा जाता है॥

"एक उत्तम कुल के लड़के का स्वभाव चोरी करने का जन्म से पड़ा था, हित मित्र पड़ौसी नातेदार जिसके घर आता, जो पाता चुरा लेता था, कई बेर लोगों ने बड़े आदमी का लड़का जान के छोड़ दिया और उसके माता पिता ने बहुतेरी ताड़ना भी दी परन्तु उसकी लत न छूटी और अंत को एक दिन सेंध लगाते पकड़ा गया और कैद हुआ। वैद्य जी ने एक समय उसकी मा से पूछा कि तुझे कुछ याद है कि जब यह पुत्र तेरा गर्भ में था तूने कभी चोरी या चोरी की कांक्षा भी की थी। उसने याद करके कहा कि हां एक दिन रसभरी खाने पर उसका चित्त ऐसा चलायमान हुआ था कि जब उसको कहीं न मिली तो वह अपने पड़ोसी की वाड़ी से चुरा लाई और इसका ऐसा चसका पड़ गया कि वह नित्य रात्रि को जाती और तोड़ लाती थी। एक रात्रि में किसी ने तोड़ते देख भी लिया था और उस समय मारे भय के बच्चा भी पेट में उछल पड़ा था।

देखो मा के दोष से बच्चा भी चोर निकला और ऐसा भारी दुष्ट हुआ कि जब जब ताड़ना पाता पछताता और कहता था कि फिर कभी न करूंगा पर वह लत तो उसके स्वभाव में पड़ी थी कैद तक जाने से न छूटी॥

ऐसे और बहुत से दृष्टांत हैं कि जैसी गर्भिणी के मन की चंचलता और शरीर की व्यथा होती है वैसाही बालक उत्पन्न होता है॥

एक और वैद्यक ग्रंथ में डाह और विरोध रखने का प्रभाव मैंने पढ़ा है, कि जो गर्भिणी वैर और ईर्षा रखती है, उसका बच्चा भी उसी दुष्ट स्वभाव का पैदा होता है, दृष्टांत जो उसमें लिखे हैं उनमें से एक यह है कि

"एक स्त्री की दो लड़कियां थीं छोटी तो अति प्यारी हँस-

मुख सूधी और भोली भाली थी परन्तु बड़ी कन्या महा कुचित्त कुटिल हठी और उपाधी। यह दुष्ट अपनी छोटी वहिन से बिना कारण जलती, उसको नित्य मारती, धक्के देती, आंखों में मट्टी झोकती, चुटकी काटती, सूई गड़ो देती और जब वह विचारी पीड़ा से रोती तो आप अलग खड़ी होके हँसती थी, मा कुछ कहती या डाटती तो उस पर आंखें निकालती और मारन के दौड़ती। इसके दुष्ट चलन से सारा घर और अड़ोसी पडोसी तक कि उनके बच्चों को भी सताया करती थी, दुखी आगये थे। यह आचार देख के वैद्यराज ने उसकी माता से पूछा कि तेरी दोनों लड़कियों का एक दूसरी से विरूद्ध स्वभाव का क्या कारण है। उसने कहा मैं नहीं जानती क्यों परमेश्वर ने बड़ी का ऐसा दुष्ट स्वभाव बनाया है। वैद्य जी ने पूछा कि जब यह दुष्ट गर्भ में थी तेरा क्या हाल था। उसने कहा कि मैं उस समय महा खेद में रहती थी, मेरा स्वामी उन दिनों एक और स्त्री से हित रखता था और जो कमाता उसी को दे देता था मैं रात दिन इसी शोक में जलो करती थी, एक दिन मारे डाह के जब मुझसे न रहा गया, मैंने चाहा कि उसके घर जाके उसे मारूं पर मेरे पति ने किसी भांति भांप लिया और मुझे डराया कि मैंनें कोई बात की तो वह मुझको मार डालेगा, अपनी जान के डर से मैं कुछ कर न सकी और रात दिन डाह की आग में जला की। यह सुनकर वैद्य जीने पूछा कि क्या छोटी कन्या के गर्भ समय भी यही गति रही, उसने कहा, नहीं बड़ी के जन्म से थोड़ेही दिन पीछे वह कहीं चली गई और आज तक पता नहीं क्या हुई, मेरा चित्त तब से शांत होगया, क्लेश सब जाता रहा। वैद्यराज बोले अफ़सोस, जो वह स्त्री पहलेही चली गई होती तो बड़ी लड़की भी दोषों से बच जाती। इस पर वह चौंक उठी और बोली कि क्या यह

उसी के फल हैं - जो यह इतनी दुष्ट उत्पन्न हुई और मुझको दुख भोगने पड़ा वैद्यजी ने कहा इसमें संदेह नहीं, क्योंकि, उस समय तेरे मन में सौत का मारने के विचार उठा करते थे डाह और ईर्षा तेरे रुधिर में समा गई और उसी रुधिर से गर्भ का पालन होता था।

इसी तरह एक और स्त्री का वृत्तान्त लिखा है कि उसको भी सौत का सामना पड़ा और संयोग से उन्ही दिनों गर्भ भी रहगया परंतु स्त्री लिखी पढ़ी और बुद्धिमती थी, उसने सोचा कि जो मैं मन में खेद रक्खूं और कलेश मानती हूं तो इस दोष से बालक मेरा दूषित होजायगा, यह बिचार के उसने अपने चित्त से ईर्षा निकाल डाली और परमेश्वर से प्रार्थना की कि मुझे शान्ति दे, डाह और विरोध मेरे पास न आय, वह सर्व काल में हर्ष और आनन्द के साथ अपना धन्धा देखती, कभी कोई चिन्ता और विषाद न करती, और रात दिन प्रसन्न चित्त रहती थी, दिन पूरे होने पर उसको अति स्वरुपवान पुत्र उत्पन्न हुआ और स्वाभाविक प्रकृति उसने ऐसी उत्तम पाई कि दिनों दिन शोभा उसकी बढ़ती गई, अपने पराये सबके साथ वह स्नेह रखता और अपनी माता की, जिसने पित्ता अपना मारके उस को सुंदर और निर्दोष जना था, तन मन से सेवा करता था॥

इन दृष्टांतों से अच्छी तरह विदित है कि संतान का भला बुरा उत्पन्न होना केवल गर्भिणी के आचार अधीन है, जैसे उसके चलन होंगे वैसीही औलाद पावेगी, इसलिये उसको, अत्यंत आवश्यक है, कि सिरे ही से इसका पूरा यत्न करे, अर्थात् दुष्ट कर्मों को त्याग दे, हँसी ठट्ठे में भी कभी झूठ न बोले, कितनीहो दुखित हो पराई वस्तु कभी न छुये, किसी के साथ कलह और विवाद न मचाये, कोई क्रोध भी करे बुरा भी कहे, अपने मांथे पर बल तक न पड़ने दे, डाह, ईर्षा, वैर विरोध, समीप न आये, चिन्ता और कलेश

से दूर भागे, शोक के पड़ोस भी न जाय, क्षोभ और भय कभी मन में न लाये, निन्दा और बुराई का नाम न ले और आलस्य को पास फटकने न दे, नहीं, तो ये सब अवगुण बच्चे के स्वभाव में पड़ जांयगे और वह रोगी, दुर्बल, पीडित और हठी भी उत्पन्न होगा।

गर्भिणी को रति करना भी शास्त्र में निषेध किया और लिखा है कि उस दोष से बालक अति कामी और व्यभिचारी उत्पन्न होता है, और इसके बहुत से दृष्टांत भी दिये हैं जिनमें से एक यह है॥

"दो स्त्रियों में छुटपने से अत्यंत स्नेह था दोनो एकही ग्राम में रहती थी, थीं और संयोग से एकही बस्ती में और एकही दिन दो कुलीन और भाग्यवान पुरुषों को विवाही भी गई और थोड़े ही दिनों के आगे पीछे दोनों को गर्भ भी रह गया। इनमें से एक तो बुद्धिमती और गर्भवती धर्म को अच्छी तरह जानती थी, उसने अपने आचार सब शुद्ध रक्खे दूसरी थोढ़ी मूर्ख थी भोग राग में लीन रही। दैवसंयोग से दोनो के कन्या उत्पन्न हुई, जिन में से बुद्धिवान वाली तो अति सुशील और सुन्दर आचरण की निकली पर दूसरी महा चंचल और छुटपनेही से चितवनों की बुरी, और अंत को यह दुष्ट अभी पूरी युवा अवस्था को भी नहीं प्राप्त हुई थी कि घर से भाग गई और उसने मां बाप को लज्जित किया।

इससे गर्भिणी को उचित है कि अपने धर्म पर चले, दूषित और निन्दित कर्मों से बची रहे और कोई ऐसी बात न करे जिसमें बालक के शरीर, प्रकृति, बल और बुद्धि में किसी प्रकार का दोष उत्पन्न हो, उस को चाहिये कि सदैव सच्च और मीठा बोले, हँसमुख स्वभाव रक्खे, सबसे झुक कर मिले, प्रेम और प्रीति से बर्ते, साव-धानी से घर के धन्धे करे और आठों पहर शांत चित्त, हर्षित और प्रसन्न बनी रहे॥

हर्षित रहने से वैद्यक शास्त्र लिखता है कि फेफड़ा फैलता और बालक सुंदर सुशील, पुष्ट, और निरोग पैदा होता है। शोक करने से श्वास घटती और बच्चे में कादरता आजाती है, आलस्य से कुरूप और टेढ़ी मेढ़ी वस्तुओं का नित्य ध्यान करने में अंग हीन उत्पन्न होने का डर रहता और काली कलूटी और बद शकल मूर्त्ति को उठते बैठते निहारने से रंग और रूप बिगड़ जाता है। इसी वास्ते ऐसी वैसी चीजों को विशेष कर शयन भवन में रखना निषेध किया और कहा है कि सोके उठकर स्त्री प्रथम अपने स्वामी का दर्शन करे और सदा उत्तम, श्रेष्ट और प्रिय वस्तु को देखे और सुन्दर सुन्दर फूलों को निहारे और विचारे, कि किस रंग और रूप का बालक कितना सोहना और प्यारा मालूम होगा, बड़े बड़े विद्वान यशस्वी और सामर्थवान पुरुष और सुन्दर, सुशील, बुद्धिमान, और लक्ष्मी स्वरूप स्त्रियों की तसवीरें घर में लटकाये और उनमें से जिस रंग रूप और गुण के बालक की चाहना करती हो, उसका रूप ध्यान पर चढ़ाये और उसके गुण और सुकीर्त्ति का मनन किया करे, ऐसे उपाय से वही रंग, वही रूप, वही गुण और वही प्रकृति, बहुधा बच्चे में आजाती है जैसा कि इस दृष्टांत से विदित होता है॥

एक महाशय के घरमें कोई मित्र उसका एक दिन गया और कमरे में एक अति सोहावनी तसवीर देख के उसने प्रशंसा की कि तेरे पुत्र की यह तसवीर बहुत ही ठीक उतारी गई है। महाशय ने कहा कि तसवीर तो मेरे पुत्र की नहीं है, पर हां यह इसकी आकृति अवश्य बनाया गया है। मित्रने पूछा क्यों कर। तब महाशय ने बतलाया कि जब मेरा पुत्र गर्भ में था मां उसकी इस सोहावनी तसवीर को नित्य निहारा और बड़ी सराहना के साथ इसी रूप का मनन किया करती थी, उसी के प्रभाव से बच्चा इसीं के सदृश पैदा हुआ और यही

सारा रंग और रूप उसने पाया ॥

इसी तरह एक और इतिहास में लिखा है कि एक मेम के शयन स्थान में किसी हबशी की तसवीर पलंग के सामने इस हिसाब उसे टँगी थी कि लेटते बैठते दृष्टि उसी पर पड़ता था, जिसका फल उसने यह पाया कि उसी काली रंगत और भोंड़ी सूरत का पुत्र उसको उत्पन्न हुआ ॥

बहुत से बच्चे सुन्दर, सूधे और मधुर स्वभाव के होते और लिख पढ़ भी जाते हैं, परंतु बुद्धि उनकी चटक नहीं होती, यह दोष भी वह अपनी माता ही से पाते हैं कि वह गर्भ अवस्था में अच्छे अच्छे, विचार जिनसे बुद्धि प्रबल हो और ज्ञान आवे सोचा नहीं करती है। गर्भवती को चाहिये कि विद्या और उत्तम गुणों का बड़ा प्रचार रक्खे ज्ञान और उपदेश की पुस्तकों को बराबर पढ़ा और अच्छी बात को सदा मनन किया करे ॥

अच्छी अच्छी पोथियों के पढ़ने और उन पर विचार करने का जो उत्तम फल मिलता है उसका भी एक दृष्टांत सुन लीजिये ॥

एक स्त्री के कई औलाद थी जिनमें सबसे छोटी कन्या तो अति सुन्दर, सुशील, विद्वान और बुद्धिमान थी, बाकी सब महा कुरूप और अनपढ़। इनको देख कर कोई नहीं कह सकता था कि वह सुन्दरी उनकी सगी बहिन है। नाम इस कन्या का मोहनी था और जैसा नाम वैसे ही गुण भी रखती थी, उसके हँसमुख स्वभाव, मधुर वाणी और स्नेह भरी बातों से अपने पराये सब उसके साथ हित रखते और मा तो उसकी इच्छा ही पर चलती थी। एक उत्तम कुल की धनवान स्त्री को बड़ा अचंभा हुआ कि ऐसे भोंड़े कुरूप और नीच घर में इस चांद सी सूरत लक्ष्मी मूरत साक्षात् सरस्वती ने क्यों कर जन्म लिया। यह बहुत दिनों तक इसी खोज में रही क एक और समय

एक दिन बातों बातों में मोहनी की माता से पूछही बैठी कि यह सुन्दरी तूने कहां से पाई, मांग में तुलसी कैसे जमाई। उसने कहा कि यह परमेश्वर की देन और मेरी अच्छी कमाई का फल है, जिस ग्राम में मैं पहले रहती थी उस में जब मोहनी गर्भ में थी एक बिसाती कुछ सौदा बेचता आ निकला, उसके पास एक बड़ी प्यारी सुनहरी जिल्द बंधी हुई काव्य की पोथी थी जिसमें एक अति सुन्दर सुशील और विदुषी स्त्री का इतिहास और उसकी तसवीर भी बनी थी। देखतेही मेरा जी उस पर लोट होगया। दाम जो पूछ तो उसने दो रुपये मांगे मेरे पासी भी उस समय दोही रुपये थे, सोचा कि पोथी लेती हूं तो खर्च की तकलीफ होगी। यह सोच कर चुपकी हो रही पर जी में ऐसा मसोसा उठा कि सारी राति नींद नहीं आई और अन्त को यही ठान ली, कि फाका करूंगी पर पोथीं जरूर लूंगीं, ज्यों त्यों करके रात काटी और सवेरा होतेही बिसाती की खोज में निकली और ढूंढ़ कर पोथी उससे मोल लेही ली, जब मैं गृहस्थी के धन्धों से छुट्टी पाती, उसको ले बैठती थी और ऐसा रस मुझे उसके पढ़ने में उत्पन्न हुआ कि उठते बैठते उसी में ध्यान लगा रहता, कोई काम करती, वही चरित्र जो उसमें वर्णन थे और वही सोहनी सूरत आंखों के सामने फिरा करती, और पढ़ पढ़ सारी पोथी कंठ होगई थी, दिन पूरे होने पर मोहनी का जन्म हुआ और ईश्वर की अद्भुत रचना और माया से इसने वही रूप, वही रंग, वही सारे गुण, और वही लक्षण पाये, बालही पन से इसकी लिखने पढ़ने में ऐसी रुचि पड़ी कि थोड़ीं छोटी अवस्था में यह निपुण होगई और एक पाठशाला में पढ़ने लगी, काव्य में भी इसको बड़ा रस है और अनेक गुणों में भी इसको बड़ा रस है और अनेक गुणों में ८ पका। सारे कुटुम्ब को यही पालती और मेरी तो आंखों का तारा और जिन्दगी का सहारा है॥

देखती हो कि वही मोहनी की मा थी जिसने और बालक भी जने थे और बाप भी सबका एकही था, फिर जब खेत भी एकही रहा और बीज भी वही, तो फल भी सब एकसे क्या न उतरे। भेद ही इसमें केवल यही था कि औरों के बेर खेत कमाया नहीं गया था और इसकी बेर कमाई अच्छी हुई, उत्तम विचारों से मन शुद्ध और बुद्धि निर्मल की गई, ध्यान ने बुरी बातों पर ध्यान दौड़ने न दिया, रुधिर में किसी प्रकार की मैल आन नहीं पाई, स्वच्छ रक्त ने गर्भ की पालना की और समझ बढ़ाई॥

गर्भवती के भले बुरे विचार और मनन शक्ति का फल जैसा वैद्यक शास्त्र ने दर्शाया वैसाही मनुस्मृति में भी कहा है कि :—

यादृशं भजतेहि स्त्री सुतं सूते तथा विधम्॥

अर्थात् जैसा स्त्री का ध्यान रहता है वैसी ही संतान उत्पन्न होती है॥

और जो वैद्यक मतवालों ने उत्तम संतान होने के वास्ते यत्न और उपाय करने का उपदेश किया है, उसी हेतु और आशय से धर्म शास्त्र ने भी पुंसवन, सीमन्त और उन्नयन संस्कार निश्चित किये हैं, और लिखा है कि गर्भस्थिति ज्ञात होने से दूसरे वा तीसरे महीने अर्थात् उसके फड़कने से पहले पुंसवन, पांचवें या छठे मास में सीमन्त और सातवें वा आठवें महीने उन्नयन संस्कार विधि पूर्वक यज्ञ सहित किये जावें, जिसमें गर्भ स्थिर और स्त्री आरोग्य और प्रसन्न बनी रहे॥

यज्ञ की जितनी सामग्री है उनसे हवन करने में जितना विकार हवा में रहता सब दूर होजाता है, रोग पास आने नहीं पाते, देह में बल बढ़ता, चित्त अत्यंत प्रसन्न रहता, और वेद मंत्रों के पाठ और ईश्वर के ध्यान से मन शुद्ध होता और ज्ञान बढाता है। इन सब

संस्कारों में उत्सव भी किया जाता है, हित मित्र, नातेदार सब इकट्ठे होते और गाना बजाना भी होता है, जिस से गर्भिणी का मन बहलता और जी खुश रहता है॥

इस लिये अत्यन्त अवश्य है कि जिस तरह अन्नादिकों की वृद्धि और उत्तमता के हेतु, खेत जोते बोए बराबर सींचे और निकलते जाते हैं उसी तरह गर्भ भी जब जब रहे श्रेष्ठ संतान उत्पन्न करने के निमित्त ये सब संस्कार और उपाय जो बताये गये हैं अवश्य किये जावें और गर्भिणी अपने देह को शुद्ध और मन को पवित्र रखने का बराबर यत्न करती रहे, विद्या के अभ्यास और ज्ञान की चर्चा से बुद्धि को बढ़ावे अच्छे अच्छे विचार मन में लावे और बुरी बातों पर कभी ध्यान न जमावे॥

सोअर और जच्चा॥

प्रसव का समय आने से पहले सूतिका गृह और दाई इत्यादि का बंदोबस्त कर रक्खा जाय, जच्चाखाना अंधेरी कोठरी या मैले और बंद मकान में न बनाया जाय, सुथरा और ऐसा घर हो जिसमें न बहुत उजियाला पहुंचे न ज्यादा ठंढ और न अधिक गर्मी, पवन के आने जाने का अवकाश रहे जिस से मंद मंद हवा आवे और देह में बल बढ़े॥

दाई भी जो रक्खी जाय वह अपने काम में निपुण और हथौटी की अच्छी और सुघड़ हो और स्वभाव की भी हँसमुख॥

पीरें जब लगें उस समय जाये के घर में दाई समेत दो वा तीन से अधिक स्त्रियां न रहने पावें और वह सब संतानवाली, दयालु और हँसमुख हों, कोई उस समय चिल्ला के न बोले, न हियेहार बातें या दूसरों के कठिन जायों की चर्चा करे, सब मीठी मठी बातें करें, ढाढ़स बंधायें और बहलायें। पीर बंद होजाय तो सब चुप होरहें और सच्ची पीर जब आने लगे बाईं करवट लिटादें और पेट मलें॥

बच्चा पैदा होने और आंवल निकल जाने के पीछे, जच्चा का अंग गर्म पानी से अच्छी तरह धो और पोछ कर पेट के नीचे गद्दी रख के चौड़ी पट्टी बांध दें और चित लिटा के सोने दें ॥

चार पांच दिन तक जच्चा बहुत उठाई बैठाई न जाय, दश पंद्रह दिन बैठने और बोलने कम पाये, सीधी ज्यादः लेटी रहे, और पेट से पट्टी भी बीस बाईस दिन बराबर बांधी जाय ॥

जच्चा मैली भी न रहने पाये, देह उसका नित्य धोया जाय, ओढ़ना बिछौना सब साफ रहे। कोई मैली वस्तु उसके घर में वा बिछौने के तले कभी रहन न पाये ॥

जन्म और जातकर्म संस्कार ॥

बालक उत्पन्न होने पर जो बच्चे की नार काटी जाती और उस समय शास्त्र और कुल रीति अनुसार जो क्रिया होती है उसी को जातकर्म संस्कार कहते हैं ॥

नाल छेदन पीछे बच्चे को जो स्नान करया जाता है, उसकी विधि वैद्यक शास्त्र में यह लिखी है कि वायु और शीत का बराव करके, बेसन वा साबुन बच्चे के देह में मले और गुनगुने जल में प्रथम फलालीन का टुकड़ा भिगोकर उससे, फिर स्पंज के बड़े टुकडे से अच्छी तरह धोये, धोने में देर न लगाये, जल्दी से नहला के साफ अंगोछे या तौलिये से शरीर उस का पोछ डाले और सफा कपड़ा उढ़ाके लिटा दे ॥

नहलाना धुलाना ॥

इसी भांति प्रति दिन नहलावे, प्रथम सिर फिर और अंग धोये, सिर पहले धोना इस वास्ते कहा है कि उसके प्रथम धो देने से बच्चे के शरीर में ठंढ कम व्यापती है, और आंखों की ज्योति बढ़ती है। पीठ और गुद्दी पर बच्चे के स्पंज से जल की धारा भी छोड़े कि इससे पुष्टता पहुंचती है और इन सब कामों में अधिक काल

न लगावे, फुर्ती से नहला धुला के देह उसका अच्छी तरह से पोंछ डाले, कान नाक या किसी इंद्री में जल का लेश न रहने पावे, फिर झट पट कपड़े पहना और उढ़ा गर्म बिस्तरे पर लिटा दे, और छाती पीठ, आंते और हाथ पांव सब धीरे धीरे दबाये और हवा से बचाये रहे ॥

जब बच्चा डेढ़ दो महीने का होजाय और सुकुमार जानपड़े, तो नहलाने के जल में पैसा दो पैसा भर खाने का लवण मिला दे और उसी पानी से नहलाये, और कुछ दिन बाद ठंढे जल से नहलाने का अभ्यास डाले ॥

जल से कभी भय न करे, यह शरीर के विकारों को दूर और रग, पट्ठे और बुद्धि को प्रबल करता है, नहलाने धुलाने और साफ रखने से बच्चा निरोग रहता और पुष्ट होता है, आत्मा उसकी सुख पाती, स्वास लेने में सुगमता होती, और स्वभाव भी उसका मधुर होजाता है ॥

बालक जब पसीने में डूबा या सर्दी से जकड़ा हो उस समय कभी न नहलावे, न जब थकित हो वा दस्त आते हों। तुरत खिलाने के बाद भी न नहलाये और न नहला के तुरत धूप में दौड़ने दे ॥

दूध पिलाने की विधि ॥

बच्चे को नाल छेदने और स्नान कराने के पीछे शास्त्र रीति अनुसार आहुति और ईश्वरस्तुति करके घी और मधु दोनों बराबर बराबर मिलाकर पहले चटावे, इससे पेट उसका साफ होजाता है और इसी हेतु से बहुधा स्त्रियां बच्चे के तालू में गुड़ घी चपका देती हैं ॥

फिर जब प्रसूता जाये के श्रम से चेते और प्रसन्न चित्त होले और दूध भी उतर आवे, तब स्तन उसके गर्म जल से धो और

पोंछ के प्रथम दक्षिण (दहिना) फिर वाम (वायां) स्तन वच्चे के मुख में दे, परंतु दूध न उतरे तो कभी ऐसा न करे, क्योंकि इस में स्त्री के स्तन सूज और पक जानें और वच्चे का मुहँ फल आवे और त्वचारोग उठ खड़ा होने का डर रहता है ॥

दूध न उतरने से २४ घंटे तक वच्चे को कुछ न मिले तो चिन्ता नहीं, इस के उपरांत एक हिस्सा गौ का ताजा दूध और दो हिस्सा पानी मिला और हलका उबाल देकर चुटकी भर कंद और जो दस्त न आया हो तो कच्ची खांड़ मिला के थोडा थोडा दे और जिस शीशी से पिलाये उसको अच्छी तरह धो और पोंछ डाले और जो दूध उस में वचे फेंक दे । दूध वच्चे को पूरा चित्त लिटा के न पिलाये ऊपर का धड़ उठा रक्खे जिस में रद्द न होजाय॥

दूध उतरने पर वच्चा छाती मुख में न ले तो कुचों पर थोड़ी मलाई मलदे, और दूध इस क्रम से पिलाये कि प्रथम मास में डेढ़ डेढ़ घंटे पीछे; द्वितीय में दो दो घंटे वाद, और इसी तरह ज्यों ज्यों बालक बढता जाय त्यों त्यों देर कर कर के, यहां तक कि अंत में चार चार घंटे के उपरांत दे और समय बांध रक्खे, यह नहीं कि जवही रोये पिलाने लगे ॥

रात को वेर वेर न पिलाये, दूर से चलकर आते ही और पसीना सूखने से पहले भी न दे । जब शरीर ठंढाने पर आवे परंतु विल्कुल ठंढा भी न होजाय तब पिलाये, जब जब दूध पिला चुके छाती धो अथवा गीले अंगोछे से पोछ डाले । दिन में वैठ के और रात को लेट कर पिलाये, आधी लेटी और आधी वैठी हुई कभी न पिलाये, पर फेर के दोनों छातियां देवे एकही से पीने का ढब न डाले ॥

जब स्त्री क्रोधित अथवा भयभीत हो, उस समय कभी न

पिलाये, क्रोध से दूध में विष उत्पन हो जाता है और नीचे लिखे बंधेज करे ॥

गर्म और कुपथ्य पदार्थ न खाये, थोड़ा और साधारण आहार करे ॥

कोठा शुद्ध रक्खे, व्रत उपवास न करे, क्रम से खाये, क्रम से सोये।

अपाहज न बने, चले फिरे, घर के काम धन्धे देखे।

चोली ढीली पहिने, चित में रोस न लाये शोक न करे।

स्वभाव शांत और मन को प्रसन्न रक्खे, उदास न रहे॥

पति से न्यारी सोये, राग भोग छोड़ दे, केवल बच्चे की हो रहे, और विशेष कर जब तक दूध पिलाये गर्भवती होने से अपने आप को अवश्य बचाये।

बहुत सी स्त्रियां दूध पिलाने में अपनी हेठी समझतीं और बच्चे को धाय पर छोड़ देती हैं, ऐसी मा महा अपराधिनी और पूरी निर्दई होती है, मा का धर्म्म है कि सारे सुख बच्चे के वास्ते त्याग दे और अपने आप दूध पिलाये, जो मा दूध नहीं पिलाती, उस मा और बच्चे में स्नेह भी कम होजाता है, और दूध के पिलाने से केवल बच्चे ही को लाभ नहीं, स्त्री को भी सुख होता है, इससे वह आरोग्य रहती, और शरीर में बल बढ़ता और गर्भपात का डर भी कम रहता है॥

दूध के न होने वा मांदगी के कारण से धाय रखना पड़े, तो उसकी गोद में बच्चा उसी उमर का हो, परन्तु पहलौठी का न हो, और उसके दूध की भी परीक्षा करली जावे, कि पानी में डूबता या स्वाद का खट्टा वा कड़वा, और रंगत में काला या पीला तो नहीं है, और न उसमें चींटी डालने से मरती है॥

जो धाय रक्खी जाय, दूध उस में बहुत हो और पतला, हलका रंगत में सपेद और नीली झलक देता हुआ हो, स्तन भी उसके ऊंचे लम्बे और कड़े हों, गर्भ से भी न हो और न मोटी न बहुत दुबली हो। सूरत शकल की अच्छी, आचरण की शुद्ध, स्वभाव की हँसमुख, बोल की मीठी और काम काज में सुघड़ और फूर्तीली हो, मैली और घिनौनी न हो। रोगी और न रोगी कुल की हो॥

बच्चे को गाय का दूध देना पड़े, तो प्रथम मास में एक हिस्सा दूध और दो हिस्से गर्म पानी, दूसरे और तीसरे महीने आधा दूध और आधा पानी, चौथे मास में दो हिस्से दूध और एक हिस्सा जल, इसके उपरांत केवल टटका दूध एक उबाल दे कर और जरा सा नमक और चुटकी भर कंद या दो तीन बताशे मिलाकर पिलाये- लवण मिलाने का हेतु यह है कि उस के सबब से बच्चे के पेट में कीड़े नहीं पड़ते॥

दूध कुछ बादी करे तो एक एक चमचा चूने का पानी मिलादे और दस्त न आते हों तो सवेरे जब बालक सोके उठे, एक चमचा ठंढा जल पिलाये और दूध में कंद की जगह कच्ची खांड मिलाये और उससे भी दस्त खुलके न आये, तो चौथाई अथवा आधा चमचा शहत चटाये॥

जहां तक बने दूध बच्चे को एक ही गौ का दे, और शक्ति हो तो गाय पाल ले, और आहार में उस को केवल घास और भूसा खिलाये, दाना न दे॥

जो स्त्री अपने बच्चे को आप दूध पिला सकती हो, वह कम से कम नौ महीने अवश्य पिलाये, पर हां अति निर्बल हो तो छठे महीने छुड़ा दे, परंतु एकही दफे नहीं, पहले रात का पिलाना बंद करे, फिर कुछ दिन पीछे सवेरे सांझ पिलाये और धीरे धीरे कर के छुड़ाये॥

निद्रा ॥

बच्चा जितना सोये अच्छा है, सोने से वे बढ़ते और मोटे होते हैं, सोते बच्चे को जगाना उचित नहीं, न सोते समय उसको झुलाना योग्य है, क्योंकि इसमें एक तो ज्वर आजाने का डर रहता है, दूसरे अभ्यास पड़ जाने से फिर बिना झुलाये वह सोता नहीं ॥

खिड़की दर्वाजे सब बंद और मुहँ ढाप करके सुलाना भी अवगुण करता है, सिर और मुँह उस का खुला और घर में हवा के आने जाने का निकास रखना चाहिये ॥

जिस घर में बच्चे को सुलाये, वहां बहुतसा असबाब और विशेष कर खाने पीने की तो कोई भी वस्तु न रक्खे. बिछौना उसका मैला न रहे, चादर और तकिये के गिलाफ नित्य धोये और बदले जांय ॥

छोटी खाट पर बच्चे को साथ लेकर कभी न सोये, बड़े पलंग पर सोया करे, जिसमें उसको बहुत सी जगह मिले, और एक का श्वास दूसरे के श्वास में न जा सके ॥

रोग रहित माता के शरीर की गर्मी और बिजली बच्चे को बहुत गुणदायक होती है. परंतु जब बच्चा कुछ बड़ा होजाय तो उसको अलग खटोले पर सुलाये, जिसमें सुन्दर ताजी हवा श्वास लेने को उसे मिले ॥

सुलाने के वास्ते बच्चे को अफीम इत्यादि देना भी बहुत बुरा है॥

तीन वर्ष की अवस्था तक बच्चों को दिन में सुलाया जाय, उपरांत दिन के सोने का अभ्यास छुड़ादे, पर रात में नौ घंटे सुलाये। खाने के बाद तुरत बालक को सोने न दे, इससे अहार कम पचता, भेजा टपकता और बुरे बुरे स्वप्न आते हैं ॥

बाजे बालकों को पैर पर पैर धरके सोने और कुर्सी मोढ़े इत्यादि पर बैठके पैर हिलाने की आदत पड़ जाती है, इसका रोक रखनी

चाहिये, क्योंकि पेड़ी क ऊपर की पिछली नली जाघों से मिली है, पैर पर पैर रखने से वह दबती, और ;उस करके 'बल घटता और पुरुषार्थ मारा जाता है इसी तरह पांव के हिलाने से यह अवगुण होता है कि जांघों की नसों पर ज़ोर पड़ता और उससे भी पुरुषार्थ घटता है ॥

खिलाई ॥

बच्चों के वास्ते खिलाई जो रक्खी जाय वह न तो कमसिन हो और न अति बूढ़ी ! सुघड़, सुथरी, स्वभाव की हँसमुख और आचरण की शुद्ध हो, लूली, लंगडी, अंधी, कानी, गुंगी, वहिरी, हकली, क्रोधी, चिड़चिड़ी, दुष्ट, आलसी, भुलक्कड़, मैली और कुरूप कभी न हो ॥

नामकरण ॥

जब बच्चा दश दिन का हो जाय, तब ग्यारहवें या बारहवें दिन पांचवा संस्कार अर्थात् नामकरण उसका करना चाहिये, और विधि इसकी शास्त्र में यह लिखी है, कि उस दिन इष्टमित्र संबंधी व्योहारी सबको बुलायें, विधिपूर्वक पूजन आराधन और यज्ञ करे, बच्चे को स्नान कराये, नवीन वस्त्र पहिनाये, पिता गोद में ले, और वेद मंत्रों से आहुति करके पुत्र हो तो ऐसा नाम धरे जिससे ॥

कुल देवता संबंद्ध पिता नाम कुर्यादिति ॥

कुल की ज्ञात और देवता का संबंध जान पड़े, भौंडा और निषिद्ध नाम कभी न रक्खे ॥

कुल की पहिचान के वास्ते अपनी अल, और ब्राह्मण वर्ण हो, तो नाम के अंत में शर्मा पद लगा दे, जैसे देवदत्त शर्मा, शिव नारायण शर्मा इत्यादि। क्षत्रिय के नाम में वर्म्मा अथवा सिंह का पद जोड़े, जसे गंगा प्रसाद वर्मा, राम नारायण सिंह। वैश्य हो तो गुप्त

या साह पद लगाये, जैसे बिहारी लाल गुप्त, भवानी साह, और शूद्र के नाम को दास पद से संयुक्त करे, जैसे निहाल दास, जानकी दास इत्यादि और लड़कियें का नाम मनुस्मृति में लिखा है कि

स्त्रीणां सुखोद्यमक्रूरं विस्पष्टार्थं मनोहरम् ।
मङ्गल्यन्दीर्घवर्णान्तमाशीर्वादाभिधानवत् ॥

प्यारा और मनोहर हो, कठोर न हो और अंत में दीर्घ स्वर आवे, जैसे यशोदा, सौभाग्यवती इत्यादि, भयानक और ऐसे नाम जो

नर्क्षवृक्षनदीनाम्नीं नान्त्य पर्वतनामिकाम् ।
न पक्ष्यहि प्रेष्यनाम्नीं नच भीषणनामिकाम् ॥

नक्षत्र, वृक्ष, नदी म्लेच्छनी, पर्वत, पक्षी, सर्पिणी, दासी, और भयंकर पद पर हों, कभी न रक्खे जायँ, जैसे रोहिणी, रेवती तुलसा, ताड़का, गोमती, गंभीरी, चांडाली, कैलासा, कोकिला, हंसा, नागिनी, किंकरी, बांदी, चण्डिका, इत्यादि ॥

निष्क्रमण संस्कार और हवा खिलाना ।

यह छठा संस्कार है जो जन्म से तीसरे शुक्ल पक्ष की तृतीया को नहीं तो चौथे महीने अवश्यही करना चाहिये । इस संस्कार से बालक को घर से बाहर भ्रमण कराने का आरम्भ होता है, और विधि इसकी यह लिखी है, कि संस्कार के दिन प्रातःकाल सूर्योदय के पश्चात् बच्चे को शुद्ध जल से स्नान करा, सुन्दर वस्त्र पहिना उसको यज्ञशाला में ले जाके अपने पति की गोद में दे और माता विधि पूर्वक परमेश्वरोपासना, स्वस्तिवाचन, शांतिकरण इत्यादि करके बालक को सूर्यदर्शन कराये और जिस स्थान की वायु शुद्ध हो वहां फिराये ॥

यही मत वैद्यक शास्त्र का भी है, कि जब बच्चा तीन या चार

महीने का होजाय, उसको नित्य सवेरे सांझ मैदान में लेजाकर हवा खिलाये, इस से वह अनेक रोगों से बचता, पुष्ट होता, रंग रूप उसका निखरता और अत्यंत सुख पाता है, और दांत निकलने में पीड़ा कम व्यापती और भूख भी उसको बढ़ती है ॥

बालक का बाहर लेजाने में, आंधी, पानी, शीत, लू, और पुर्वाई और उतरहरी हवा का बराव रक्खा जाय, और कपड़े इस भांति पहिनाये उढ़ाये जावें जिसमें सर्दी और लू दोनों का बचाव रहे ॥

जब बालक पैरों चलने लगे तो उसको अभ्यास दिलोया जाय कि हवा खाने रोज जाया करे, चलने फिरने से पट्ठे मजबूत होते, लहू शुद्ध होतो, शरीर का विकार जाता रहता और बुद्धि भी प्रबल होती है ॥

टीका ॥

बच्चों को शीतला के दुःख से बचाने के निमित्त, जब वह दो महीने का हो जाय, टीका लगा देना अत्यंत आवश्यक है, इस के न लगाने से बच्चा बड़ा कष्ट पाता और जान जोखिम रहती है, और लगा देने से किसी प्रकार का भय नहीं रहता, और एक बड़ा लाभ यह भी होता है कि बच्चे का रूप बिगड़ने नहीं पाता। देखो कोई मेम या उसका बच्चा शीतला-मुहँ-दाग दिखाई नहीं देता, और अपने देश की बिरली स्त्री होगी जिसके मुख पर दाग न हो, कारण इसका यही है, कि वह टीके से डरती नहीं, और यहां की स्त्रियां मारे उसवास के बच्चों को छिपाती फिरतीं और अंत को पछताती हैं॥

टीका लगाने के समय या पीछे भी, बालक को कोई दुःख नहीं होता, अच्छी तरह खेलते फिरते हैं। हां एक हलका सा ज्वर आजाता है, सो उस में किसी औषधि देने का भी काम नहीं, केवल यह करना चाहिये कि दाना सब उठे, दबने या टूटने न पावे, और जो

बच्चे की बांह में कुछ जलन होती हो, तो पर से दो चार बेर मलाई या मक्खन लगादे ॥

शीतला ॥

शीतला निकल आवे तो बालक को ठंढे और ऐसे घर में रक्खे जहां सूर्य की किरण पहुंचती और मंद मंद हवा आती हो; मकान स्वच्छ और ओढ़ना बिछौना साफ और हलका रहे, मैली कोई वस्तु रहने न पाये, दाने नोचने या खुजलाने न दे, बच्चा छोटा हो तो हाथों में थैली चढ़ा दे, दानों में पर से मलाई अथवा मक्खन लगाये, ठंडक पड़ने के निमित्त देह को पानी या उस में सिरका मिला के धोये, दाग न पड़ने के वास्ते चूने का पानी और नारियल का तेल लगाये, छिलके उतरने लगें तब गर्म पानी से नहलाये, तेल नित्य लगाये और आंखें रोज धोये ॥

दांत ।

बच्चों को दांत निकलने के समय बड़ी पीड़ा होती है, तप आजाता और अनेक रोग खड़े होजाते हैं। उसकी रोक के निमित्त आहार का बड़ा विचार रक्खे, विकार करने वाली वस्तु कभी न खिलाये, सूक्ष्म और साधारण अहार दे, मल रुकने न पाये और दस्त आते हों तो कभी उनको रोक न करे, मसूड़े फूल आवें, तो नश्तर दिलादे, मक्खन वा शहद अँगुली में लगा के मसूड़े दबाये। शहद में नमक मिला के दिन में तीन चार बेर मसूड़ों पर मले, मुलहठी की सुन्दर छिली और चिकनी चूसनी बच्चे के हाथ में पकड़ा दे और रोज हवा खिलाने भेजे ॥

झाड़ फूक ॥

बहुधा स्त्रियां बच्चों की मांदगी में झाड़ फूक पर बड़ा विश्वास रखतीं, स्यानों की खोज में दौड़तीं, तरह तरह की धूनियां जलातीं,

गंडे तावीज ला ला के बांधतीं और कठले बना बना कर पहिनाती हैं, जिन से गुण के बदले और भी अवगुण होता है, गंडे और कठलों के डोरे और तावीजों के कपड़े बच्चे के मुख की लार और तेल में जो उनको लगाया जाता है भर कर मैले होते और उन में दुर्गन्ध आने लगती है, जो और भी विकार करती है। कठलों के बोझ से नसें भी दबती हैं जिससे बच्चे पनपने नहीं पाते, इधर उधर का पानी लाके जो पिलाती हैं उनसे अनेक उपद्रव उठ खड़े होते हैं और अंत को जान के लाले पड़ जाते हैं, इस लिये यह उन्माद अच्छा नहीं, जब बच्चा मांदा पड़े तुरंत हकीम वैद्य या डाक्टर को बुलाये, जो दवा वह बतलाये तुरंत मंगा के खिलाये, परमेश्वर से प्रार्थना करे कि हे सर्वशक्तिमान कृपा कर के जल्दी इसको अच्छा करदे ॥

वस्त्र ॥

बच्चों को नंगा न रक्खे, न मलमल तनज़ेब इत्यादि पहिनाये। मोटे, गर्म साफ और ढीले ढाले कपड़े उनको इस भांति पहिनाया करे, कि सारा शरीर ढका रहे और गले से कमर तक का अंग तो कभी खुला रहने न पाये, छाती, पीठ और आंतों को ठंढ से बहुत बचाये, बाहर भेजने के समय हाथों पैरों में दस्ताने और पाताबे भी पहिराये, जो न बहुत कसे हों न अति ढीले ॥

फ़लालीन के कपड़े बहुत ही गुणदायक होते हैं, सब न हो सके तो एक कुर्ता वा सलूका अवश्यही पहिनाये और नीचे उसके कोई दूसरा वस्त्र न रक्खे, छोटे बच्चों के पेट और कमर के चारों ओर रात को फ़लालीन की ढीली पट्टी भी लपेट दिया करे, इससे सर्दी और बहुतेरे रोगों की रोक होजाती है ॥

जाड़ों में काले, बसंत ऋतु में नीम रंग, और गर्मी और बर्सात में सपेद और साफ़ कपड़े पहिराये, रोज़ बदलने और उजले पहिनाने

की सामर्थ्य न हो, तो रात के उतारे कपड़े, जो धोने वाले हों उनको साबुन अथवा रीठे इत्यादि से धोके सुखला डाले और जो धोने के योग्य न हों, उनको अच्छी तरह से धूप और हवा दे, जिसमें पसीने की नमी और बू जाती रहे ॥

मैले कपड़े कभी न पहिनाये क्योंकि बच्चों के रोम रंध्रों में से जो पसीना निकलता है वह मैल से सूख के अनेक रोग उत्पन्न करता है॥

बालक को साफ़ और सुथरा रखना यही उसका बड़ा शृंगार है। मखमल, गिरंट, साटन, किमखाब या किनारी गोटे के कपडे पहिनाना और गहने लादना अच्छा नहीं, और यह महा भौंडी चाल है कि चांदी सोने से तो बच्चे को लाददे, और वस्त्र से नंगा या मैला कुचैला रक्खे। जो रुपया इन चीज़ों में खर्च किया जाता है, उनकी जगह जो सादे और मोटे कपड़े बनाये जांय तो दिन में चार जोड बदल के पहिना सकते हैं, जिससे बालक के शरीर की भी रक्षा हो सकती है. वह सुथरा भी रह सकता और गहनों के बदौलत जो उसकी जान के लाले रहा करते हैं उस विपत्ति से भी बच सक्ता है। इसके सिवाय गहनों के बोझ से बच्चे के शरीर की कोमल नसें भी दबती और एक बड़ा दोष यह भी उत्पन्न होता है कि अंत में बालक घमंड करने लगता है, ग़रीब के बच्चों को तुच्छ समझना और काम काज करने से विकृति रहता और जी चुराता है ॥

अन्नप्राशन ॥

मनुस्मृति अ० २ श्लोक ३४ में आज्ञा है कि

षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि. यद्वेष्टम्मङ्गलंकुले ॥

अर्थात् छठे महीने या और जो समय कुल रीति से निश्चित हो, उस दिन इस संस्कार को करे। विधि इसकी भी वही सब है जो और संस्कारों की ॥

जब बच्चे का दूध छुड़ाये और अन्न पर उसको लगाये, पहले पहुंनही सूक्ष्म और साधारण आहार खिलाये, जैसे साबुदाना, आरा-रोट, निशास्ता, खिचड़ी, खीर, इत्यादि. या नानपाव के रवे पानी और थोड़ दूध में लपसी की तरह पकाये और चुटकी भर कन्द और जरासा नमक मिला के चटाये. दूध बच्चे को न सुखाये तो केवल पानी में बनाये और जब दूध हज़म होने लगे तो कुछ दिन निरे दूध में पकाये। जब बालक के दांत निकल आवें तब मोटे और बेछने आटे की फुपकियां दूध अथवा शोर्वे वा दाल में मलकर खिलाये महीन आटे की रोटी कभी न दे, वह गर्द करती और छानने से आटे का सत्त भी निकलता है। भात देना चाहे तो चावल फरहरे न रक्खे अच्छी तरह से गला दे ॥

खिलाने के समय बांध रक्खे, बे वक्त कभी न दे और कौर भी बड़े बड़े न खिलाये, छोटे छोटे ग्रास दे और खूब चबवाये, निग-लने और जल्दी जल्दी बच्चा खाने न पाये, आहार जितना ज्यादा चबलाया जाता उतनाही जल्दी पचता और गुण करता है, बे रुचि और हावके से बहुत भी न खिलाजाय, इससे अजीर्ण होता और पेट हांडी की नाई निकल आताहै. शरीर दुर्बल होजाता है, कमजोरी बढ़ती और स्वभाव बच्चे का चिड़चिड़ा पड़जाता है ॥

पानी खाने के साथ न पिलाय, थोडा ठहर के दे और खाना बड़ी सुथराई के साथ खिलाये, बच्चे को गीजने और हाथ मुह भरने न दे, नाक पोछने को सपेद रुमाल पास रक्खे और मक्खी हिलाती जाये ॥

बालकों को बासी, बहुत चिकने और मसाले के पदार्थ, पकान और मिठाई भी अधिक न खिलाये, मीठे से दांतों को अवगुण पहुं-चता, पेट में गड़बड़ रहती, कलेजे में विकार होता और पित्त

बढ़ता है, दूध, मलाई, मक्खन और मांस इनको अवश्य खि· लाये कि ये सब गुण करते हैं, और फलों में अंगूर, अनार, सेब, संगतरे, शहतूत, जामन, इसटावेरी, गंडेरी और खबूंजे की फांक भी दे, और जो कभी आंब कोई चुसाये तो पतले रस का और मीठा हो, रात में उसको भिगो भी रक्खे जिस में गर्मी उस की निकल जाय और ऊपर से थोड़ा गौ का दूध पिलाये। अमरूद, बेर इत्यादि फ़ल और ऐसें पदार्थ जो पेट में चुभें और ज़ल्दी हजम न हों खाने न दे, पर हां जब बालक का बल बढ़े और पचाने की सामर्थ्य अच्छी होजाय तब धीरे धीरे सब चीजों के खाने का अभ्यास दिलाये, जिस में ऐसा सुकुमार न होने पाये कि कभी कुछ खाये तो तुरत मांदा पड जाय, बच्चों को पान खाने की बड़ी रोक रक्खे, इस से दांत खराब जाते और भूख भी घटती है॥

जो स्त्रियां मदिरा पीती हैं वे अपने बच्चों को भी पिलाती हैं और यह बहुत ही बुरा है, सिवा दवाई के और वह भी जब तक कोई अच्छा हकीम या डाक्टर न बतलावे; कभी ऐसा खेल न खेले, बच्चा तथा जवान और बूढ़ा सब के वास्ते यह विष के तुल्य है॥

छोटे बच्चों को खड़ा करना और चलाना॥

बहुधा लोग बच्चों की अंगुली पकड के उनको खड़ा करते और चलाते हैं, साल भर से छोटे बालक के साथ ऐसा खेल अच्छा नहीं, इस में उसके शरीर का बोझ उसके पैरों पर पड़ता है, जिस से पांव के गट्टे निर्बल, जंघा बक्र अर्थात् फिरे हुये और जानू टेढ़े हो जाते हैं॥

डराना॥

छोटे बच्चों को जब वे रोते या कोई, उपाधि करते हैं, स्त्रियां हू हा इत्यादि भयानक शब्द और नाम, और कभी डरावनी सूरत

बना बना के डरातीं और शयाने बालकों को भूत प्रेत की कहानियां भी सुनाती हैं जो बहुत ही अनुचित है, क्योंकि बालक के हृदय कोमल होते हैं, भय व्यापने से बुद्धिहीन होजाते और ज्ञान तक जाने का डर रहता है, और जो इस आपदा से बचे, वे डरपोक तो अवश्य ही होजाते हैं, अपनी परछाईं से भी भागते और सारी उमर कायर बने रहते हैं, इस लिये उनको केवल आंख का भय दिलाना चाहिये, और किसी प्रकार से डराना अच्छा नहीं ॥

जो कदाचित बच्चा कहीं भय खा जाये, तो दीवा सारी रात जले और चौकसी रहे, कि जब वह चौंक उठे जागता पाये, ऐसी अवस्था में बालक को कभी घुरकी न दे, बड़े प्यार से उसको बह- लाये और फुसलाये जिसमें भय उस के जी से निकल जाये ॥

खिलौना ॥

खिलौने जो बालकों को दिये जावें, वे विशेष कर ऐसे हों जो दबाने से बोलें, या फूकने से बजें, वा जिनको लेकर वह दौडें और कूदें फांदें, ऐसे खलों से उनका बल बढ़ता और शरीर पुष्ट होता है ॥

इसका बड़ा ध्यान रहे कि बच्चे जो खेल खेलें वे गुणदायक और बुद्धि की वृद्धि करने वाले हों, ऐसे न जिनसे उनकी आरोग्यता बिगड़े और बुद्धि भ्रष्ट हो ॥

लकड़ियों को और खिलोनों के सिवा बडी छोटी तरह तरह की गुडियां देना और खेल की रीति बताना चाहिये, जिसमें वें खेलही खेल में सारे धंधे जो उन को स्यानी होने पर करने पडगे सीख जावें ॥

स्वभाव और आचरण ॥

बच्चों का स्वभाव और उनके आचरण बनाना या बिगाड़ना

दोनों स्त्री के अधीन है, जो सिरे से बुराइयों को नहीं रोकती और अच्छे ढंग नहीं डालती हैं, बालक उनके महा दुष्ट और दुखदाई निकलते हैं, और जो भले बुरे का विचार रखती और उत्तम ढंग पर लगाती हैं, आप भी सुख उठातीं और बच्चों को अति सुशील और सुघड़ बनाती हैं॥

मा का धर्म है कि जन्महो से बच्चे के स्वभाव और चलन सुधारने का यत्न करे और इस भूल में न रहे कि स्याना होने पर आप सुधर जायगा, बच्चे कोरे घडे के सदृश होते हैं, जिस में जो वस्तु प्रथम डाली जाती सदा उसी का प्रभाव बना रहता है, और प्रकृति भी उनकी दर्पण की नाईं होती है, कि उस पर जैसी छाईं पडती वैसीही आकृति दिखाई देती है, वह जो देखते और सुनते वही करने लगते हैं, इस वास्ते उनकी दृष्टि के सामने कोई खोटे कर्म होने या कानों में फूहड शब्द कभी पडने न दे।

स्त्री अपने चलन भी निर्दोष और स्वभाव हँसमुख रक्खे, चिल्लाना, झुंझलाना, नाक भौं चढ़ाना सब छोड़ दे, किसी से तू तुकार तक न करे और उत्तम गुण और सुन्दर आचरण की आदर्श बने, नहीं तो जो अवगुण बच्चा देखेगा वही ग्रहण करेगा और जो प्रकृति उसकी पडेगी जीवन काल तक बनी रहेगी॥

इस हेतु से कि बच्चे का स्वभाव मधुर बने और वह नम्रता और मिलनसारी सीखे, सदा उसके साथ हँसते और बडे प्यार से धीमा और मीठा बोल, कभी कडवी और खेल में भी कोई झूठी बात न कहे, और जबान टूटतेही अभ्यास दिलावे, कि प्यारी तोतली बोली में जो बात उसके मुहँ से निकले, मीठी प्यारी सच्ची हो, फूहड़ कठोर और झूठ बोलने से झिझके, गाली देने, मारने और मुहँ चिढ़ाने से डरे, बिना दिये किसी चीज पर कभी आंख न

उठाये, खाने पीने की वस्तु दूसरे बच्चों के साथ बांट चूट के खाये और मिल जुल के खेले ॥

जितने बालक हों सबको सम दृष्टि से देखे और बराबर का स्नेह करे, जिसमें उनमें परस्पर वैर विरोध उत्पन्न न हो, बच्चों के स्वभाव में डाह बहुत होती है, एक को पक्ष करने से दूसरा तुरंत बुरा मान जाता और ईर्षा करने लगता है ॥

इसकी बड़ी चौकसी रक्खे कि बच्चों को कोई चिढ़ान और उनके स्वभाव में क्रोध या क्रूरता आने न पाये, चिढ़ाने से बालक चिड़चिड़ा होजाता, क्रोध करने से पनपने नहीं पाता और क्रूर होजाने से निर्दई बना रहता है। जब कभी बालक को क्रोधित देखे उसको शांत करने के लिये कुछ खेल की वस्तु देकर ध्यान उसका बँटा दे, यह न करे कि उस समय आप भी चिल्लाने लगे ॥

बालक को बहुधा दुतकारना, फिटकारना भी अच्छा नहीं, बात बात में झिड़कने और झुंझलाने से स्वभाव उसका बिगड़ना, ढीठ और निर्लज्ज होजाता, बात नहीं मानता, और झिड़की सुनते सुनते स्याना होने पर कादर भी बन जाता है, इस लिये कोई चूक उससे होजाय, तो सावधानी से समझाये। जो कुछ कहना हो प्यार से कहे, और काम जो लेनो हो दिलासे से ले ॥

जहां तक हो सके बच्चों का लाड़ और प्यार करे, परिहास के निमित्त नये नये खेल निकाले, जरा जरा सी चीज का भी उनके ध्यान रक्खे, उनकी याचना और उलाहनों को सुने और हर काम और खेल में उनका यहां तक साथ दे कि आप भी बालक बन जाय, पर हां उनको शिर पर न चढ़ाये कि वे ढीठ और हठी बन जायें और कहा न मानें ॥

बालक का आज्ञा भंजन करना बहुत ही बुरा और सब बुराइयें

की जड़ है, यह दोष छोटी छोटी बातों पर ध्यान न देने और भोंड़ा दुलार करने से आ जाता है, और अंत को हठ बच्चे का इतना बढ़ जाता है कि कोई वश नहीं चलता। इसवास्ते मा को चाहिये कि दुलार प्यार सब कुछ करे, पर साथही में दबाव भी अपना बनाये रक्खे और ऐसे ढंग पर लगाये कि बच्चा आंखों की सैन समझ भय माने, और जो कहा जाय वही करे॥

यह ढब बहुत ही सुगमता से यों पड़ सकता है, कि ज्योंही बच्चा बठने और घुटनों रेंगने लगे उसी समय से जब किसी चीज़ पर लपके उसको रोक दे, जहां एक बेर अंगुली हिलाई या ना कहा जायगा, वह तुरंत ही रुक जायगा, इसी तरह से जब वह कुछ बोलने और पैरों चलने लगे, जब किसी वस्तु को उठाये या लेना चाहे और धीरे से मना करने पर न माने, तो डांट के कहे, आंखें चढ़ी देख और डपट सुन के वह अवश्यही डर जायगा और छोड़ देगा, फिर उसको कोई खिलौना देदे और कहे कि ख़बरदार वह वस्तु कभी न छूना, यह खिलौना लो और खेलो, इस ढंग से उसको कोप और प्रीति दोनों दृष्टि का ज्ञान आने लगेगा और वह बराबर कहा मानेगा॥

दो बातों का बड़ा ध्यान रहे, एक तो जिस चीज़ पर बच्चा मचले वह कभी न पावे, दूसरे जो बात उसको मना करे, वह ऐसी दृष्टि और दृढ़ता के साथ कहे कि अवज्ञा करने का उसको हियाव न पड़े॥

बालक को कभी ताड़ना देने की जरूरत पड़े तो यह न करे कि हलके हाथों से दो धौल लगादे और दांत पीस या बक झक के चुप हो रहे, इससे उसको कभी भय न होगा और वह भी ढीठ हो जायगा। जी कड़ा करके उसको एकांत में पकड़ लेजाये और इस ज़ोर से तमाचे मारे या कान मले कि वह कष्ट उस को कुछ दिनों याद रहे, फिर उसको वहीं एकेले छोड़कर चली आवे और जब वह शांत

होले, थोड़ी देर पीछे जाकर कहे कि तूने देखा कि हठ और अवज्ञा करने का कैसा बुरा फल मिलता है, और जो दुख तूने उठाया इस से निश्चय होता है कि अब ऐसा अपराध तू कभी नहीं करेगा। इस कहने पर वह अवश्यही क़रार करेगा कि फिर ऐसा क़सूर कभी न करूंगा, तब उसको गोद में लेकर प्यार करे और कहे कि अच्छा मैंने तेरा दोष क्षमा किया, परंतु तूने परमेश्वर की भी अवज्ञा की है, चल उससे भी माफ़ी मांग। यह कह कर पूजा के स्थान में उसको लेजाय और प्रार्थना कराये कि हे जगदीश मैंने जो माता की आज्ञा भंग की है, वह दोष मेरा क्षमा कर॥

इस भांति ताड़ना देने और क्षमा मँगाने से दो गुण निकलेंगे, एक तो बालक हठ करने से डरेगा, दूसरे ईश्वर की भक्ति भी छुट-पनेही से उसके कोमल हृदय में जमने लगेगी, रात को भी जब मा बालक को लेकर लेटे, प्यार के साथ उसको समझाये, कि बड़ों का कहा न मानना बहुतही बड़ा दोष है, परमात्मा कोप करता, मां, बाप, दुखी होते और अपने पराये सब बुरा कहते हैं; कोई पास खड़ा होने नहीं देता, और दृष्टान्त सुना सुना के उस के हृदय में जमा दे कि मां बाप का वचन टालना और हठ करना बहुत ही बुरा है, इस प्रकार ताड़ना करने और समझाने से बालक सदा कहे में रहता और भय मानता है॥

जो स्त्रियां बुद्धिमती होती हैं उनको मार पीट करने का अवसर बहुत ही कम पड़ता है, वे खेलही खेल में बच्चों को वश कर रखती और ऐसा आज्ञाकारी बना देती हैं कि वे कहे बे पानी तक नहीं पीते, जितने बालक होते हैं, सबको वे अपने सामने बैठलातीं और अलग अलग खेल बतला कर कहती हैं कि सब अपना अलग खेल खेलो, धूम और दंगा न करो, बालक खेल में लगते, आप अपना धंधा करती और बीच बीच में उनको देखती, और मन उनका बढ़ाती जाती हैं। जब

घड़ी दो घड़ा वे खेल चुकते उनसे कहती है कि बस अब बंद करो। इस कहने पर जो बच्चे प्रार्थना करते हैं कि खेल पूरा होने में कुछ कसर रह गई है, आज्ञा दो तो पूरा करलें, वह हुकुम देती है कि अच्छा जल्दी से पूरा करके मुझ से कहना। बच्चे खुश होजाते और जब खेल समाप्त होता मा को दिखाते हैं। वह प्रशंसा करती है कि वाह बहुतही सुन्दर बनाया है, इस को अच्छी तरह सँभाल के रख दो जिसमें बिगड़े न, वे सँवार के रख देते और तुरत माता के पास आन बैठते और जो वह बताती बड़े हर्ष से करते हैं॥

ऐसी युक्ति से बर्तने में बच्चे प्रसन्न भी रहते और कहा भी मानते हैं, और मा की भी यह दुर्गति नहीं होती कि वह भौंक रही है और बच्चा सुनता नहीं, जिस बात को मना करती वही अदबदा के करता है, कहीं कुछ तोड़ता कहीं कुछ फोड़ता, मा पकड़ने जाती आप गली में हो रहता, यह दांत पीसती वह मुहँ चिढ़ाता, यह कोस्ती काट्ती वह गालियां बकता है॥

बालकों के सुधारने का अति श्रेष्ट उपाय यह भी है कि स्त्री रोज़ रोज़ का ब्योरा लिखती जाय कि आज बच्चे ने क्या अपराध किया और क्या ताड़ना पाई ऐसे प्रबन्ध से बड़ा लाभ यह भी होगा कि शासन करने की नीति में स्त्री आप निपुण होजायगी और बालक के स्वभाव और प्रकृति को पूरी तौर से जांच और अवगुण को सुधार सकेगी॥

बहुत सी स्त्रियों को ठीक वृत्तांत रोज लिखना कठिन जान पड़ेगा और प्रथम कुछ दिन उनको श्रम भी बहुत होगा, पर आगे इससे बड़ी सहायता मिलेगी, मनन करने की सामर्थ्य भी बढ़ेगी, समझ ठीक हो जायगी और अपने दोषों को भी स्त्री जानती और सुधारती जायगी॥

इसके वास्ते एक बही अथवा किताब बना ले और इस भांति खाता रक्खे॥

१	मिती वा तारीख
२	दोष जो बच्चे ने किया
३	दण्ड जो उसको दिया गया
४	क्या अवज्ञा की
५	क्यों कर आज्ञा वश हुआ
६	हठ छुड़ाने और वश में लाने में क्या कठिनता पड़ी
७	क्यों कर पराजय हुई
८	किन बातों में बालक को क्रोध आया
९	किन उपायों से शांत किया गया
१०	किन किन बातों में उसकी रुचि पाई जाती है
११	दया और धर्म में किन बातों से रुचि उसकी बढ़ती है

शिक्षा ॥

बालकों को छुटपने से सिखलाना चाहिये कि नित्य सवेरे सांझ माता पिता और घर के सब बड़ों को प्रणाम, छोटों को प्यार और संबंधी इत्यादि जो आवें उनको भी यथायोग्य दण्डवत् नमस्कार किया करें, सबकी प्रतिष्ठा मानें, प्रिय वचन बोलें, कोई घर में आवे या आप किसी के घर जांय तो धूम न मचायं, सावधान होके बैठें, किसी की चीज न छूएं, न किसी से कुछ मांगे, बकवाद भी न करें, न दूसरों की बात में तर्क दें, जब दो मनुष्य बातें करते हों आप चुप बैठे रहें, कोई कुछ पूछे तो सावधानी और मधुरता के साथ उत्तर दें, गूँगे बहिरे न बन जायं, दूसरों के बालक जब अपने घर आवें अथवा आप जब उनके घर जायं उन से स्नेह और प्रीति से मिलें, मीठा बोलें, लड़ाई झगड़ा मार पीट कुछ न करें, मिल के अच्छे अच्छे खेल खेलें ॥

जब तक बच्चे लिखने पढ़ने के योग्य हों उनको छोटे छोटे श्लोक, दोहे, भजन, स्तुति, इत्यादि सिखलावें और सीधे सुरों में गवावें ॥

गाने का बच्चों को बड़ा चाव होता है और बड़ी प्रसन्नता से सीखते हैं, इसके सिखलाने में यह भी गुण होता है कि बच्चों की छाती चौड़ी होती, फेफड़े और शरीर को बल पहुंचता, बहुत से रोग नाश होते, कान में रस आता, आवाज सुरीली होता, उच्चारण सुधरता, मन और चाव सुन्दर बनता, उद्योग बढ़ता और ईश्वर के भजन में भी प्रीति उत्पन्न होती है ॥

इसके सिवा स्त्री को चाहिये कि आप पोथी लेके बैठे और बच्चों को छोटी छोटी कहानियां पढ़कर सुनाये, गिनती सिखलाये, पहाड़े याद कराये, फल फूल कौड़ी पैसा या दाने लेके जोड़ना

बतलाये, रंग रंग के फूल, फल पत्ते और पेड़ों के गुण और नाम, भांति भांति के जानवरों के काम बताये, प्रत्यक्ष वस्तु के गुण समझाये, सुन्दर उदाहरण और चित्रों के द्वारा तरह तरह की शिक्षा दे और ननिहाल ददिहाल की पीढ़ियों के नाम, गोत्र, प्रवर इत्यादि और कुल के इतिहास जो हों बतलाये और जब बालक पांच वर्ष का होजाये विद्यारंभ कराये।

मनुस्मृति अ: २ के ये श्लोक हैं कि

३५ चूड़ाकर्म्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्म्मतः।
प्रथमाब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्॥
३६ गर्भाष्टमाब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥
३७ ब्रह्मवर्चस कामस्य कार्य्यं विप्रस्य पञ्चमे।

अर्थ—वेद में आज्ञा है कि द्विजातियों का चूड़ाकर्म (मूड़न) पहले या तीसरे साल, और उपनयन संस्कार (यज्ञोपवीत और वेदारम्भ) जन्म अथवा गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण, ग्यारहवें क्षत्रिय और बारहवें वैश्य का करना चाहिये, पर जिसको विद्याबल और व्यवहार की शीघ्र इच्छा हो तो पांचवें, छठे, और आठवें साल में करदे॥

मुसलमानी राज्य के समय से इस देश में यह चाल पड़गई है, कि जो लोग फार्सी पढ़े हैं जब पहले पहल बच्चों को पढ़ने बैठाते हैं, तो उस दिन जो कृति की जाती है, उसको मकतब कहते हैं, उसमें हिंदूपन दिखाने के निमित्त नाम मात्र को नवग्रह का पूजन और पण्डित को चार पैसे दक्षिणा देके, मौलवी साहब की यथा शक्ति प्रतिष्ठा करते और लड़के को फार्सी पढ़ाना आरंभ कराते हैं, देववाणी और वेदों का पढ़ना तो कठिन है अपनी भाषा तक नहीं

सिखाते, जिस करके उसको न अपने धर्म में ज्ञान होता, न वह पुरानी मर्य्यादा को समझता है, बस शास्त्र और उत्तम विद्याओं का लोप होता जाता है ॥

सब से पहले बालक को अपनी भाषा पढ़ानी चाहिये जब उसमें बोध हो जाय तब संस्कृत और अंगरेजी जहां तक होसकै पढ़वाये और फार्सी भी सिखाये ॥

विद्यारंभ होने पर छोटे बच्चों को स्कूल भेजने का काम नहीं, स्त्री उनको अपने आप पढ़ाये, मा की मीठी और प्रेम भरी बोली बच्चे के मन पर बड़ा असर करती और वह खेलही खेल में बहुत कुछ सिखा सकती है ॥

बच्चों के पढ़ाने की सुगम रीति यह है कि प्रथम उनको ताश और तस्वीरों के द्वारा अक्षरों का बोध कराये, फिर मात्रा लगाना सिखाये, क्रम से दो, दो, तीन तीन, चार चार, अक्षरों के शब्द और पशु पक्षी इत्यादि के नाम बतलाये, नित्य की बोल चाल में जो शब्द आते हैं सिखलाये; तत्पश्चात् छोटी कहानियां और उपदेश की पुस्तकें पढ़ाये, पर बहुत श्रम न ले, किताब से थोड़ा और जबानी ज्यादः बताये और चित्र खींचना और सुन्दर अक्षर लिखना भी सिखाये ॥

सात वर्ष की अवस्था तक दिल और दिमाग पर बहुत जोर न डाले, आरोग्यता बल और बुद्धि को बढ़ाये और उत्तम आचरण बनाने का विशेष ध्यान रक्खे, बुरे ढब कोई न डाले, दुष्ट, और नीच संगत से बहुत बचाये, बोल चाल अदब कायदा अच्छी तरह से सिखाये, और बतलाये, कि जब दूसरे के घर जाये किस प्रकार उठे बठे, जब अपने घर कोई आये क्योंकर बैठलाये और क्या आदर करे, दया और धर्म की रीति बताये, परमेश्वर की भक्ति सिखाये

और समझाये कि यह सारी सृष्टि जो देख पड़ती है उसी की रची है, वही पालता, वही जिलाता और वही रक्षा भी करता है, जब बच्चा किसी जीव को सतावे या कोई और दोष करे, उसका भय दिलाये कि ऐसे बुरे कामों से परमात्मा कोप करता है, और उससे नित्य सबेरे सांझ ईश्वर की स्तुति प्रार्थना भी कराये

इस भांति सिखाने और पढ़ाने से बालक सुशील भी बनता और स्कूल जाने की अवस्था तक मातृभाषा अच्छी तरह से सीख जाता और फिर उस को दूसरी भाषा और प्रत्येक विद्या के पढ़ने और सीखने में बड़ी सुगमता होती है ॥

जब लड़का स्याना होजाये तब स्त्री आप न पढ़ाये पुरुषों को सौंप दे, परंतु जो वह पढ़कर आवे सुने और लिखना उसका देखा करे ताकीद करती रहे ॥

बाल शिक्षा में कभी आलस्य न करे और इस नीति को याद रक्खे कि

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः ॥

अर्थात् वह मा पूरी शत्रु है और वह पिता पूरा वैरी जो बालकों को पढ़ाता नहीं है ॥

लड़कियों को स्त्रियां आपही पढ़ायें, और उनको गृहस्थी के सारे धंधे, भांति भांति की रसोई, पकान, अचार और मुरब्बे बनाना, सूई के काम और चित्रों क खीचना, गाना, बजाना, सब अच्छी प्रकार सिखलाये, बीमार की टहल भी जिस भांति करनी चाहिये बतलाये और जब अवसर पड़े उन्ही से काम ले, ऐसी सेवा में अभ्यास करने से विचार बढ़ता, स्वभाव नम्र होता और अपने आप पर विश्वास करना और मन मारना आता है, हलके हाथों से काम करने और धीरे बोलने की आदत पड़ती और निर्दयी

भी नहीं होती हैं ॥

क्रोध, कलह, उपाधि, उन्माद, ईर्षा, द्वेष, छल कपट, झूंठ, लुतरापन, इत्यादि कोई दोष उन में आने न दे, अच्छे आचार सिखाय, कोमल स्वभाव बनाये, लज्जा और शील रग रग में पहिनाये और ज्ञान और धर्म की नीति बतलाये ॥

आठ या नौ वर्ष की अवस्था होने पर लड़कों के साथ खेलने न दे और खेल भी उनको ऐसे गुणदायक सिखलाये जो स्याने और घरबार वाली होने पर उनके काम आयें और वही सब धंधे होजांय ॥

स्यानी लड़कियों को एकेले न छोड़े और न दो को एक बिस्तरे पर साथ सोने दे, और उनकी चाल ढाल बाल चाल पहनावे उढ़ावे पर ध्यान रक्खे ॥

कोई लड़की एक क्षण भी बिना काम रहने न पाये और ऐसी आदत डाली जाय कि किसी प्रकार की टहल करने में वह अपनी हीनता न समझे और न जी चुराये, घर के सारे धंधे चाव और उमंग से किया करे, और अपनी तो कुल टहल आपही करले किसी का सहारा न ढूंढ़े, अपने वस्त्र और चीज़ अपनी आप धरे उठाये, कपड़े अपने आपही रँगे, बिछौना आप बिछाये और पलँग तक अपना आप बिनले ॥

बदचलन स्त्रियां लड़कियों के पास कभी बैठने न पावें, न उन के सामने बेजा हँसी और निर्लज्जता की बात कोई कहे और न बुरी कतावें या राग व रस की पोथियां वे पढ़ने या सुनने पायें ॥

लड़कियों के मुहँ पर उनके विवाह की चर्चा कभी कोई भूले से भी न करे। इससे बहुत बड़ा अवगुण यह होता है कि रजोधर्म को वे अपनी अवस्था से पहले प्राप्त होजाती हैं ॥

कसरत करना ॥

लिखने पढ़ने के सिवा, अभ्यास कराया जाय कि कम से कम

दो तीन मील रोज़ लड़के टहला करें, नित्य बीस डंड और सौ हाथ मुग्दल फेरें और लेज़म हिलायें, सामर्थ्य हो तो घोड़े ले दिये जांय, जिसमें उसी पर स्कूल जांय, बांक, पटा और बिनवट भी सीखें, तीर और गोली से निशाना लगायें, तैरना सीखें और गान विद्या में अच्छा अभ्यास बढ़ायें, इन सब कामों से शरीर आरोग्य रहता, देह में बल बढ़ता और फुरती आती है॥

घर में कोई पेशा होता हो, तो वह अवश्य और दूसरे हुनर या कलादिकों के काम भी सिखलाये जांय, दस्तकारी जानने से जीविका कभी दुर्लभ नहीं होती और न पराधीन होना पड़ता है, चीन, अरब, ईरान, अफ़ग़ानिस्तान इत्यादि देशों में रीति है कि जब तक मनुष्य किसी प्रकार की शिल्प विद्या सीख नहीं लेता उसको विवाह नहीं होता है और फिरंगियों में तो कोई ऐसा पुरुष या स्त्री न होगी जो कुछ न कुछ गुण न रखती हो, यह उसी उत्तम चाल का फल है कि एक से एक कुबेर बना फिरता और यहां जिस को केवल चाकरी की वृत्ति है, कल नौकरी छुटी आज भूखों मरता है॥

हकलापन खोने का इलाज॥

जो बालक हकलाता है, बहुधा निर्बल जल्दबाज और उतावला होता है, उसके मन में विचार इतने वेग से उठते हैं कि जल्दी बोलने में उलझन पड़ जाती है, और जब मांदा या थका होता है तो और भी ज्यादः हकलाने लगता और क्रोध या उद्वेग की अवस्था में तो मुहँ से साबित बात भी नहीं निकलती है, पर जब सावधान होता, अथवा जिन से स्नेह रखता है, उनके साथ अकेले में साफ बोलता और कम हकलाता है॥

यह दोष दो सबब से होजाता है, एक तो भेजा, तालू इत्यादि

में विकार, या जीभ छोटी होने के कारण, और वह असाध्य है। दूसरे, रगों के पुरा काम न देने से। यह उपाय करने से जाता रहता है. इसलिये पहिले तो डाक्टर को दिखाये कि तालू या जीभ तो दूषित नहीं हैं, और उनमें कोई दोष न पाया जाय तो यह उपाय करे ॥

(१) ध्यान रक्खे कि जब वालक हकलाये कोई हँसने और चिढ़ाने न पाये ॥

(२) शांति और सहनशीलता के साथ उसकी वात सुने और बड़े प्यार से समझाये कि सावधान होके और विचार विचार के बोले ॥

(३) जल्दी बोलने की आदत छुड़ाये और अभ्यास दिलाये कि धीरे धीरे और तौल तौल के मुहँ से बात निकाले, जल्दी न करे, सांस ले ले कर बोले ॥

(४) एकांत में उसको ले जाके बातें करे, जिस शब्द पर हकलावे उसको दुहरा तेहरा के कहलवाये और जल्दी जल्दी बोलने न दे ॥

(५) समझा के बतला दे कि जहां बोलते बोलते उलझन आवे अपने दहने हाथ की अंगुली से बांयें हाथ के अंगूठे की पास वाली अंगुली तोड़ने लगे ॥

(६) पत्थर या कंकड़ का एक छोटा और साफ टुकड़ा उस को देकर कहे कि मुहँ में रखके एकांत में जाकर टहले और अपने मन से धीरे धीरे बातें करे और इस तरह नित्य अभ्यास बढ़ाये ॥

(७) झुक के या टेढ़ा मेढ़ा बैठकर किसी से बातें न करे, बोलने के समय सीधा और तनके बैठा करे, या खड़ा होके बोले ॥

(८) ताकीद करके हर रोज थोड़ी देर मुद्गर या लेजम उस

से हिलवाया करे, इस से उसका सीना चौड़ा होगा और इस दोष के सिवा खांसी या आवाज बठी होगी तो वह भी अच्छा हो जायगी और नसों की कमजोरी से और जो रोग होंगे वे सब भी जाते रहेंगे ॥

(९) छोटे छोटे भजन और गीत भी गवाये और गान विद्या खूब सिखलाये, इसमें ताल, सुर और बोल इत्यादि पर बड़ा ध्यान रखना पड़ता और उस के सबब से यह दोष पूरा मिट जाता है ॥

विवाह प्रकरण ॥

मनुस्मृति में आज्ञा है कि

वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम् ।
अविप्लुतब्रह्मचर्य्यो गृहस्थाश्रममाविशेत् ॥

अर्थात् पूरे ब्रह्मचर्य्य के साथ पहले तीनों वेद, अथवा दो, या एकही यथावत पढ़े और विद्या संचय करे, तत्पश्चात् गृहस्थाश्रम धारण करे ॥

और इस पर भविष्य पुराण में इतना और बढ़ाया है कि जब पुरुष कुछ धन संपादन भी करले तब गृहस्थी बने ॥

इस लिये माता पिता को उचित है कि बालकों का विवाह संकार करने में उतावली न करे, शास्त्र की मर्यादानुसार प्रथम उन को अच्छी तरह से पढ़ावे और जब वे अनेक विद्या और गुणों में संपन्न और बुद्धि और बल के प्रबल हो जायँ और लड़का कुछ कमाने भी लगे या कमाने के योग्य हो ले तब उनके विवाह का प्रयत्न करें ॥

इस पर जो कोई यह तर्क करे कि इस आज्ञा में तो विवाह का समय व्यतीत हो जायगा, लड़कियों को बैठा रखने में मा बाप

कोपातक भी होगा और नरक भोगना पड़ेगा, क्योंकि कहा है।

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी।
दशवर्षा भवेत्कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला॥
माता चैव पिता तस्या ज्येष्ठभ्राता तथैवच।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्॥

अर्थ—आठ वर्ष की अवस्था तक लड़की गौरी कही जाती; नवें वर्ष रोहिणी, दशवें में कन्या और उसके उपरांत रजस्वला कहलाती है, जिसको बिना ब्याही देखने से मां बाप और बड़ा भाई तीनों नरक में जाते है॥

यह निरा भ्रम है और वचन भी प्रामाणिक नहीं। इसका खण्डन भी पहले तो उन्हीं कृतियों से होता है जो विवाह संस्कार में की जाती और इतने छोटे बच्चों से हो नहीं सकती हैं, दूसरे वर कन्या दोनों का पढ़ा लिखा होना इस से भी विदित, कि उन को बहुत से वेद मंत्र पढ़ने पड़ते हैं, जो ऐसे बालक उच्चारण भी नहीं कर सकते, तीसरे परस्पर प्रतिज्ञा जो उस समय दोनों करते हैं, वह न आठ वर्ष की लड़की समझ सकती है और न नौ वर्ष का लड़का। उनको तो यह भी ज्ञान नहीं होता कि हो क्या रहा है और हम कर क्या रहे हैं, अपनी जान में उसको भी एक खेल समझते हैं, और ऐसे विवाह को गुड़ियों का ब्याह तो मैं भी कहूंगा, अंतर केवल इतना है, कि उसमें बच्चे अपने मन का चाव निकालते हैं, और इस में बूढ़े।

छोटी अवस्था में विवाह की आज्ञा श्रुति स्मृति किसी में नहीं है, और व्यास, दक्ष शातातप, वृद्ध गौतम, आश्वलायन, बौधायन, इत्यादि सबका यही मत है कि प्रथम लड़के शास्त्रों को पढ़ें और अनेक विद्या प्राप्त करलें, तब विवाह करें, और लड़कियों के वास्ते

भी यही लिखा है कि विवाह से पहिले वे अच्छी प्रकार पढ़ाई जांय जिसमें अपना धर्म और कर्म समझ सकें ॥

हेमाद्रि धर्मशास्त्र का श्लोक है

कुमारीं शिक्षयेद्विद्यां धर्मनीतौ निवेशयेत् ।
द्वयोःकल्याणदा प्रोक्ता या विद्यामधिगच्छति ॥
ततो वराय विदुषे कन्या देया मनीषिभिः ।
एषः सनातनः पंथा ऋषिभिः परिगीयते ॥

अर्थ—कुमारी कन्या को प्रथम विद्या पढ़ावे और धर्म नीति सिखावे, क्योंकि जो विदुषी होती है दोनों कुल को सुख देती है। विद्या पढ़ाने और धर्म शिक्षा देने के पश्चात् विद्वान वर के साथ उसका विवाह करे यही सनातन धर्म ऋषि लोगों ने कहा है ॥

अज्ञात-पति-मर्य्यादामज्ञात-पति-सेवनां ।
नोद्वाहयेत पिता बालामज्ञात-धर्म्मशासनां ॥

अर्थात् जब तक कन्या पति की मर्यादा और पति-सेवा की रीति जान न ले और धर्म शासन से अज्ञात रहे तब तक पिता उसका विवाह न करे ॥

वेदों की भी श्रुति है, देखो ऋग्वेद मंत्र ३ सू ५५ मं १६

आधेनवोधुनयन्ता मशिश्वाः शवर्दुधाशशा। या अप्रदुग्धाः नव्यानव्यायुवतयोभवन्तीर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥

अर्थ—कुमारी युवा विदुषी कन्या पूरे युवा विद्वान वर के साथ विवाही जाय, छोटी अवस्था में कभी विवाह का ध्यान भी न करे ॥

यजुर्वेद. अः ८ मं १

उपयाम गृहीतोस्यादित्ये भ्यस्त्वाविष्णु ॥
ऽउरुगायैषतेसोमस्त १७ रक्षस्वमात्वदभन् ॥

अर्थ-ब्रह्मचर्य सेवन की हुई युवती कन्या का विवाह उसी के

॥ समान श्रेष्ठ और विद्वान वर के साथ किया जाय ॥

अथर्व वेद, कां ११ सू, ५

ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्ददे पतिम् ।

अर्थ ब्रह्मचर्य पूर्ण करके कन्या जवान पति को प्राप्त होवे ॥

मिताक्षरा धर्मशास्त्र का श्लोक है,

अविप्लुतब्रह्मचर्य्यो लक्षण्यां स्त्रियमुद्वहेत् ॥

अर्थ-अखण्डित ब्रह्मचर्य पूर्ण करके ऐसी स्त्री से विवाह करे जो लक्षण-संयुक्त हो ॥

इस श्लोक में "लक्षण्यां स्त्री" लिखा है। स्त्री आठ नौ वर्ष की लड़की की संज्ञा नहीं, यह उसी को कहेंगे जो समर्थ और युवा होचुकी है, और लक्षण संयुक्त कहने से यह आशय है कि स्त्री भी ऐसी हो जो संतान उत्पत्ति की योग्यता, विद्या, उत्तम गुण, और सुन्दर आचार रखती हो ॥

इन प्रमाणों से "अष्ट वर्षा भवेद् गौरी,, वाले श्लोकों का पूरा खंडन होता और यह शंका भी निवृत्त होती है कि कन्या रजोधर्म प्राप्त होजायगी तो दान करने में दोष होगा, क्योंकि जब युवा होजाने पर विवाह करना लिखा है तो ऋतुमती का दान निषेध नहीं कहा जा सकता, इसके सिवा मनुस्मृति का प्रमाण है ॥

त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतु मतीसती ।

ऊर्द्ध्वंतुकालादेत स्माद्विन्देत सदृशम्पतिम् ॥

अर्थात् ऋतुमती होने पर तीन वर्ष तक कन्या के वास्ते श्रेष्ठ वर ढूंढ़ा जाय, जो उससे बढ़कर न मिले तो फिर गुण, कर्म और स्वभाव में जो उसके बराबर हो उसके साथ विवाह दे ॥

विष्णु स्मृति

ऋतुत्रयमुपास्यैव कन्या कुर्यात् स्वयं वरम् ॥

अर्थ—कन्या मासिक धर्म होने पर ३ वर्ष पिता आदि पुरुषों की अपेक्षा करे इसके अनंतर स्वयं योग्य वर खोजे।

वौधायन

त्रीणि वर्षाणि ऋतुमती कांक्षेत् पितृशासनं।

ततश्चतुर्थे वर्षेतु विंदेत सदृशं पतिम्॥

अर्थ-उत्तम वर की कांक्षा में तीन वर्ष तक ऋतुमती पिता के शासन में रहे, चौथे वर्ष बराबर का जो वर मिले उससे विवाह करे॥

वेद और शास्त्रों ने ये सब वाक्य वृथा नहीं बक दिये हैं, बहुत कुछ सोच समझ और आगम विचार करके यह नीति निश्चित की है, जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों का कल्याण हो और उनके सुख में कोई बाधा न पड़े॥

समझना चाहिये कि रजस तो स्त्रीत्व का चिन्ह है, जिस कन्या में यह लक्षण न पाया जाय उसका तो दानही करना निष्फल है, और छोटी अवस्था में इसकी पहिचान असंभव है॥

दूसरे आठ नौ वर्ष की लड़की या लड़कों के गुण अवगुण जान नहीं पड़ते, न कोई कह सकता है कि अच्छे निकलेंगे वा बुरे और पुंसक होंगे या निपुंसक और जहां ऐसे संबंध होते हैं, प्रत्यक्ष देखने में भी आरहा है, कि कहीं तो लडकी के माता पिता पछताते, कहीं लडके के मा बाप अपने पुत्र का दूसरा विवाह ठहराते, कहीं बहू सासु को आठ आठ आंसू रुलाती, ससुर को गालियां सुनाती और आतेही आते घर बिाहर बाट कर देती है और जो दैव योग से वह अच्छी और सुशाल निकली और साहबजादे निकम्मे, तो आज बीबी का कडा उतार लेगये, कल्ह नथ चुराली, पर सौ कुछ और क़िया, घर तीन तेरह किया॥

तीसरे, जो अवस्था बालकों के गुण और विद्या सीखने की है, उसमें जब उनपर गृहस्थी का बोझ डाला जायगा, तो वे क्योंकर पढ़ लिख सकेंगे, और जब अनपढ़ और निर्बुद्धि रह जायँगे तो क्या गति उनकी होगी, किस तरह गृहस्थी के जहाज़ को चलायेंगे, जीविका कहां से लायेंगे, और संतान का पालन पोषण कैसे कर सकेंगे ॥

चौथे सबसे भारी उपद्रव यह भी है, कि वैद्यक शास्त्र की मति अनुसार १५, १६, वर्ष की अवस्था तक बालकों के जीने के लाले रहते, और ग्यारह बारह साल तक तो बहुत ही डर, और जो जीते भी हैं वे छुटपने में विवाह होजाने से रोगी और दुर्बल होजाते हैं, बाढ़ उनकी मारी जाती, शरीर निर्बल पड़जाता, देह भरती नहीं, आयु भी क्षीण होजाती, बल और बुद्धि का नाश होता और आपस में हित भी नहीं रहता ॥

इस से विदित है कि ऐसे निन्दित विवाह से गुण और विद्या की हानि तो होती है, आरोग्यता भी बिगड़ती, आयु भी घटती और बाल विधवा होजाने का भी बहुत ही बड़ा भय रहता और यही कारण है जो नित्य देखने में भी आता है कि जिस कन्या का बड़ी धूम से विवाह किया और हजारों रुपये लुटाये थे, दो दिन नहीं बीते कि वह बिचारी आप लुट गई, हाथों की मिहँदी छूटने नहीं पाई थी कि रांड भी होगई, और कौन! वह निर्दोष बच्चा जो यह भी नहीं जानती कि विवाह किसको कहते हैं और रंडापा किसका नाम है। चूड़ियां तोड़ने और गहने उतारने के समय भौचक्की हो हो के कहती है, क्यों मेरी चूडी तोड़ती और गहने छीने लेती हो, एक एक का मुहँ ताकती और पूछती है क्या हुआ जो रोती हो, उस व्यथा के सहने और देखने वालों की जो गति होती है ध्यान करने से छाती फटती है और उस अभागिनी की सारी उमर जिस संताप से कटती और मा बाप को जो दुःख उठाना पड़ता है वेही जानते हैं ॥

जहां ईश्वर की कृपा रहती और ऊपर लिखी आपदा नहीं आती है, वहां इस विलक्षण विवाह का यह फल भी प्रत्यक्ष देख पडता है, कि गालों पर लाली आने नहीं पातीं, रंगत पीली पड़जाती है, शरीर भरने नहीं पाथो, देह दुर्बल होजाती है, गर्भ थमता नहीं, ठहरा भी तो बच्चा जीता नहीं, और जीया भी तो आये दिन बीमार रहता। स्त्री का यह हाल होजाता है, कि आज दांतों में दर्द, कल्ह हाथ पाव में पेठन, परसों उठा नहीं जाता, जवानी उभरने नहीं पाती वुढ़ापा कमर झुका देता है ॥

यह वही भरतखंड देश है जिसके मनुष्यों की आयु अगले समय में सौ वर्ष से अधिक होती थी, और अब पचास साल जीना कठिन हो रहा है, यह वही देश है जहां लम्बे चौड़े, हृष्ट पुष्ट वलवान और पुरुषार्थी पुरुष होते थे और अब दुवले पतले निर्वल और आलसी होते हैं, यह वही देश है, जिसमें एक से एक शूरवीर, यशस्वी, और प्रतापी, वुद्धिमान, पण्डित, ज्ञानी और मुनीश्वर होगये, और अब महा कायर, दरिद्री, मूर्ख और अज्ञानी होते हैं, यह वही देश है जहां कैसी कैसी विदुषी, गुणवती, सुशीला, और आचारपालने वाली स्त्रियां होती थीं, और अब कैसी मूर्ख, गुण-हीन, दुष्ट, वद्चलन, और वेहया ॥

इस विकृति का कारण केवल अविद्या और वही वाल विवाह है, आगे स्त्री और पुरुष जव परिपूर्ण विद्या और अनेक व्यवहार सीख लेते थे, तव विवाह उनका होता था, और अब यहां तक उतावली होती है, कि वच्चा पेट में आया और सगाई होगई, जवान टूटने नहीं पाई फेरे भी पड़गये ॥

इस कुरीति का प्रचार, एक तो अनेक जातियों में वहुतसा बिभाग होजाने और उस पर भी ऊंच नीच का विचार बढ़ने से विशेष होगया ॥

दूसरा कारण यह भी है कि दूर देश की यात्रा आगे कठिन थी, बाहर जाने में कष्ट और खर्चा भी अधिक पडता था, इस वास्ते सब अपने ही अपने नगर वा आस पास में लडकियां देने लेने और विरादरी के घर थोड़े रहने से जल्दी करने लगे, तीसरे मुसल्मानी राज्य में उपद्रव के डर से भी स्यानी लडकियों को विना विवाही बैठा रखना अच्छा नहीं समझा जाता था, चौथे विद्या के लोप होजाने और मूर्खता का अन्धकार छाजाने से माता पिता ने वडा धर्म अपना केवल यही समझा कि जैसे वन जल्दी लडकी के हाथ पीले करदो और अपने सिर का वोझ टालो, पांचवें धनाढ्य पुरुषों ने अपने जी का अरमान निकालने और छोटे वच्चों का खेल देखने के निमित्त भी इस कुचाल को वढ़ा दिया, और छठे, स्त्रियों को इस लालसा ने कि जल्दी पोती पोते खिलावें और भी अनर्थ ढाया ॥

जो अब भी अपना और अपनी संतात का हित समझें और दूषित विवाह को, जो अविद्या का मूल, और शोक का घर और अनेक विपत्ति की खान है, वंद करके प्रथम वालकों को गुण और विद्या सिखावें, और जब कम से कम तेरह चौदह वर्ष की लडकी और अठारह उन्नीस साल का लडका होजाय तब उसका विवाह करें, तो भी वहुत कुछ दोष मिट सकते हैं, और जो वैद्यक शास्त्र के अनुकूल अच्छी तरह से योग्य और समर्थ हेजाने पर दोनों संयुक्त किये जावें, तो संतान भी उनकी अति उत्तम, आरोग्य और वलवान उत्पन्न हो और उमर भी वढ़े, जैसा कि ऋग्वेद का प्रमाण है ॥

तुर्वीं र हं शरदः शश्रमाणा ।
दोषा वस्तोरुष सोजरयन्ती ॥
मिनाति श्रियं जरि मातनूना ।
मप्यून पत्नी वृषणो जगम्युः ॥

अर्थात् पूरे जवान पुरुष का पूरी जवान स्त्री के साथ विवाह करने से उत्तम संतान उत्पन्न होती है और दोनों पूर्ण अवस्था को भी प्राप्त होते हैं ॥

. इतने दिनों तक रोकने में जो आचार उनके बिगड़ने और कोई दोष उत्पन्न होने का भय समझा जाय, तो उस से बचाने का उपाय यह है, कि कभी उनको स्वतंत्र होने और किसी व्यसन में पड़ने न दे, कुसंग से बहुत बचाये रहे, लड़कियां लड़कों के साथ और लड़के लड़कियों के संग बैठने और खेलने, या एकेले भी रहने वा गली, बाजार, नाच तमाशे इत्यादि में कहीं फिरने न पावें, राग रस की पोथियां और कहानी पढ़ाई और सुनाई न जांय, सवेरे से रात में सोने तक का समय ऐसा बांट दिया जाय कि एक क्षण भी खाली न रहने पाय. धर्म के कर्मों में उनकी प्रीति, भगवत भजन में उत्साह, गान विद्या में रुचि, और लड़कों को डंड, मुगदर कुस्ती आदि का भी विशेष चाव दिलाया जाय, गाने और कसरत के शौक से बुरे लक्षण न पड़ेंगे, और इन सब यत्नों के करने से चलन शुद्ध रहेंगे. मन चंचल न होगा और रात दिन लिखने पढ़ने और अच्छे गुण सीखने में लगे रहेंगे और उत्तम शिक्षा पा जायँगे ॥

जब विवाह का समय आवे संबंध करने से पहले माता पिता को चाहिये कि वर और कन्या के जोड़ को सब तरह से विचार लें उनके गुण विद्या और स्वभाव की परीक्षा करें, दोनों के शरीर बल और आयु को देखें और उनके कुल को भी अच्छी प्रकार जांच लें ॥

मनुस्मृति का वाक्य है

अ ३ श्लोक ६

महान्त्यपि समृद्धानि गोजाविधनधान्यतः ।
स्त्रीसंबंधे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—दश कुलों की कन्या के साथ, चाहे वे गाय पशु और धन धान्य में कितने ही बड़े हों कभी संबंध न करे ॥

हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम् ॥
क्षय्या-मया-ऽपस्मारि-श्वित्रि-कुष्ठि-कुलानि च ॥

अर्थ—(१) जिस कुल में उत्तम क्रिया न हो (२) जिसमें उत्तम पुरुष न हों (३) जिस घर में कोई विद्वान न हो (४) जिस कुल में शरीर के ऊपर बड़े बड़े लोम हों (५) जिस कुल में ववासीर (६) जिस में क्षयी रोग (७) जिस में सूजन का रोग (८) जिस में मृगीरोग (९) जिसमें श्वेत कुष्ट (१०) और जिस में गलित कुष्ट हो इनसे संबंध न करे ।

मिताक्षरा का प्रमाण है, कि ऐसी कन्या ढूंढ़े जो लिखी पढ़ी और अच्छे गुण और सुन्दर आचार रखती हो और जिसका

५२ अनन्यपूर्विकां कांताम् असपिंडां यवीयसीम् ॥
५३ आरोगिणीं भ्रातृमतीम् समानार्षगोत्रजाम् ॥
पंचमात्सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतस्तथा ॥
५४ दश पुरुष विख्याताच्छ्रोत्रियाणां महाकुलात् ॥
स्फीतादपि न संचारि रोगदोष समन्वितात् ॥

किसी पुरुष के साथ प्रसंग न हुआ हो, जो सुन्दर हो, सपिंड न हो, वर से अवस्था, डील और डौल में छोटी हो, अरोगिणी और भ्रातावाली हो, सगोत्र न हो मातृ पक्ष में पांच और पितृ पक्ष में सात पीढ़ी का अन्तर हो, जिसके मां और बाप दोनों की पांच पांच पीढ़ी प्रसिद्ध हों और कुल जिसका विद्यवान, कुटुम्बी, और रोग दोषादि से रहित हो ।

सपिंड, सगोत्र, और रोगी कुल जो वर्जित किये हैं वे इस हेतु से कि जिसमें खून का बराव रहे और संतान निर्दोष पैदा हो,

और उमर और डील डौल में छोटी इस वास्ते कहा है कि पुरुष स्त्री से बलवान होना चाहिये।

यही मति वैद्यक शास्त्र वालों की भी है कि जिनसे खून मिला हो विवाह उनके साथ कभी न किया जायं, क्योंकि इसमें दूषित संतान पैदा होने का डर रहता है, वर की उमर कन्या से दूनी नहीं तो डेवढ़ी अवश्य हो, और स्त्री, पुरुष से पतली और उसके कंधे तक लम्बी हो, बहुत नाटी न हो॥

इसी तरह वर के वास्ते लिखा है कि वह भी

एतैरेव गुणैर्युक्तः सवर्णः श्रोत्रियो वरः।
यत्नात्परीक्षितः पुंस्त्वे युवा धीमान् जनप्रियः॥

अर्थ—इन सब गुणों से संयुक्त, सवर्ण और विद्यावान् ढूंढ़ा जाय। यत्न से उसके पुंसक होने की भी परीक्षा करली जाय, और वह जवान, बुद्धिमान्, व्यवहार में चतुर, वाणी का मधुर और स्वभाव में नम्र हो॥

इस श्लोक में वर को सवर्ण ढूंढ़ना जो लिखा है उसका यह अर्थ है कि रूप रंग गुण कर्म स्वभाव प्रकृति सब बातों में कन्या के बराबर अर्थात् उसका पूरा जोड़ हो, यह नहीं कि केवल जन्मपत्री से वर्ण और विधि मिला ले, अच्छा बुरा कुछ न देखे और व्याह दे॥

मनुस्मृति का वाक्य है

अ० ९ श्लोक ८८ और ८९

उत्कृष्टायाभि रूपाय वराय सदृशायच।
अप्राप्तामपि तान्तस्मै कन्यां दद्याद् यथाविधि॥
कामा मा मरणात्तिष्ठेद् गृहे कन्यार्तुमत्यपि।
न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित्॥

अर्थ—ऐसे श्रेष्ठ और रूपवान् वर को कन्या देनी चाहिये जो

सब बातों में उसके बराबर हो। चाहे जन्म भर कन्या बिना विवाही बैठी रहे परंतु गुणहीन बे जोड़ और दुष्ट पुरुष के साथ कभी उसका विवाह न करे॥

विवाह का सुख तभी प्राप्त होता है जब शारीरिक और आत्मिक दोनों भाव से वर और कन्या का जोड़ पूरा रहता, और प्रीति भी इनमें तभी बढ़ती है, जब स्वभाव और प्रकृति एकसी होती है। नीति शास्त्र का वचन है

समानशील-व्यसनेषु सख्यमिति

अर्थात् एक से स्वभाव और बराबर कामवालों में हित बढ़ता है॥

स्वभाव और प्रकृति एक सी न रहने से हर दम विवाद रहता और बात बात में क्लेश बढ़ता है, रात्रि दिन की कलह से घर की शोभा बिगड़ती, दरिद्रता घेर लेती, धर्म का नाश होता और ऐसे में जो औलाद होती है, वह भी महादुष्ट, कुपात्र, रोगी और दरिद्र। इसलिये मा बाप का धर्म है कि दोनों के शरीर, रंग, रूप, चलन, व्यवहार, स्वभाव, प्रकृति, बल, बुद्धि, विद्या, और गुण सब अच्छी प्रकार जांच और विचार के संबंध करे, और कुल को भी खूब देख भाल ले, कि प्रतिष्ठित निशकलंक, शुभाचार, गुणवान् और गृहस्थ है, यह नहीं कि केवल जाति देखली, कि अपने से ऊंची है और लड़का चाहे लुच्चा या कुनबा सारा दुष्ट भी हो, लड़की ब्याह दी॥

कुलीन॥

जाति बड़ी होने से कोई कुलीन नहीं हो जाता है, कुलीन वही कहलाता है जो दोषों से रहित और गुणों में संपन्न हो और कुलीन भी सही, वो किस काम का जब लड़की को सुख न प्राप्त हुआ। यह बड़ी भोंडी चाल है कि झूठी डींग मारने को कि

हमने ऐसी ऊंची जाति में अपनी लड़की विवाही उस वेचारी का गला काटा जाता है, और आप भी यह फल पाते हैं, कि हज़ारों देते और पीछा नहीं छूटता है॥

धर्म शास्त्र में यह कहीं लेख नहीं है, कि ऊंचे कुल में लड़की दे और नीचे कुल की लड़की ले। जहां लिखा है वह यही कि सम अर्थात् अपने वरावर का कुल हो और गुण विद्या और भलमंसी में भरा पुरा। देखो, कहा है

यथोरात्मसमंवित्तं जन्मैश्वर्य्याकृतिर्भवः

तयोर्विवाहो मैत्री च नोत्तमाधमयो क्वचित्॥

अर्थात् धन, जाति, ऐश्वर्य्य, रूप और विस्तार में जो अपने वरावर हो उसी के साथ विवाह और मैत्री करनी चाहिये, न उसके संग जो अपने से ऊंचा या नीचा हो॥

वैर, प्रीति, विवाद व्यवहार और विवाह यह सब वरावर वालों ही के साथ करना योग्य है॥

सजाति और भाई वंदी में न कोई बड़ा है और न कोई छोटा, जितने हैं सब वरावर, इस वास्ते जिस कुल में उत्तम लोग उत्तम व्यवहार और उत्तम लड़के वा लड़कियां मिलें उन्ही से संवंध करना चाहिये॥

बड़ी उमर का विवाह और बूढ़े पुरुष के साथ जवान स्त्री का संवंध॥

जिस तरह छुटपने का विवाह निन्दित है, वैसे ही वहुत बड़ी अवस्था का व्याह भी अच्छा नहीं, इससे भी अनेक दोष उत्पन्न होते हैं, सोलह, सत्रह वर्ष की अवस्था तक स्त्री और पच्चीस तीस साल की उमर तक पुरुष का विवाह होजाना इस देश में अति आवश्यक है बूढ़े पुरुष के साथ जवान स्त्री का संवंध करना तो महा दूषित है॥

करार दाद अर्थात् विवाह पर रुपया ठहराना ॥

यह भी बड़ा खोटा व्यवहार इन दिनों हो रहा है कि कोई तो कुछ लेके लड़की देते, कोई लड़के का मोल तोल करते, और जो अति कुलीन कहे जाते हैं वे तो इस व्यापार से जन्म जन्मान्तर के लिये जीविका बना लेते हैं। दो चार लड़की लड़के हुये मानो घर का दरिद्र जाता रहा और यह प्रचार केवल निर्द्धनों में ही नहीं, धनवान पुरुष भी चुकाते और ठहराते हैं, कि इतना तिलक में लेंगे, इतना द्वारे पर पहुंच के, और इतना २ फ़लानी २ रीति के समय॥

यह महा निन्दित चाल और अनेक दोपकारक है, और यह भी इसी का नीच फल है, कि कहीं तो पांच वर्ष की बच्ची साठ वर्ष के बूढ़े को विवाही जाती, और कहीं तीस चालीस साल की स्त्री विना व्याही बैठी रहती है, कहीं पीपल वा बर्गद से फेरे पड़जाते और कहीं एकही के विवाह में गृहस्थी विक जाती है॥

लड़की लड़कों का विवाह एक धर्म प्रवन्ध है, न लौंडी गुलाम का सौदा, अब तो केवल ब्राह्म विवाह होते हैं, अगले समय में जब आठ प्रकार के विवाह होते थे तब भी ऐसी अनुरीति न थी॥

ब्राह्म विवाह की प्रकीर्ति मानव धर्म शास्त्र में केवल यह लिखी है कि।

आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुति शीलवते स्वयम्।
आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्त्तितः॥

अर्थ—कन्या को वस्त्रादि से अलंकृत् कर, अर्थात् कपड़े गहने पहना, उसके योग्य जिस सुशील और विद्वान् वर को बुलाया हो, उसका सत्कार करके दान देवे॥

मिताक्षरा में यह भी लिख दिया है कि अलंकृत् करने में अपनी शक्ति से भी न बढ़े और यह वाक्य यह है–

ब्राह्मो विवाह आहूय दीयते शक्त्यलंकृता ॥

अर्थात् ब्राह्म विवाह में जितनी सामर्थ्य हो उसके अनुसार कन्या को अलंकृत करके दान करे ॥

शास्त्र की बांधी इस उत्तम मर्यादा को तोड़ कर जो कुरीति चलाई और धर्म मार्ग में विघ्न डाला है, यह भी पिछले समय के धनाढ्य पुरुषों के उन्माद का फल है, कि उन्होंने अपने धन के मद में झूठे नाम के वास्ते तरह तरह का विस्तार बढ़ाया, जिससे गरीबों का मरण होगया और अंत को ये सब पाप होने लगे, इस दुष्ट और धर्म नाशक चाल को जसे बने जल्दी मिटाना अति आवश्यक है ॥

रीति और रस्मौ ॥

विवाह आदि उत्सव में और भी बहुत से भोडे देन लेन होते और उनके प्रभाव से कुछ न कुछ टंटा बखेड़ा भी अवश्य ही हो जाता और रीतें भी जो की जाती हैं महा नीच और निन्दित हैं, जैसे वर को झाड़ूकी सीके मारना,उससे जूती पुजवाना, कन्या की घघरी वा सुत्थन उसके गले में डालना, उसका जूठा खिलाना, कन्या के नहाये हुये गंदे पानी से वर को नहलाना, कुम्हार का चाक फिराना इत्यादि और अभिप्राय इन कुरीतियों का यह बतलाया जाता है कि ये सब करने से शगुन होता और वर कन्या के वश रहता है ॥

यह कुल उपहास की बातें और मूर्खता के लक्षण हैं। वर को कन्या का वशीभूत रखना चाहती हो तो उसको अच्छे गुण सिखावो जो देख के वह मोहित होजाय ॥

गालियां गाना ॥

इस जुड्डज और टोने टटकों के सिवा स्त्रियां अपनी सुशीलता

और बुद्धि की चमत्कार भी यों दिखाती हैं कि वरात दर्वाजे पर पहुंची और गालियां गाने लगीं और वह भी कोने में बैठ के नहीं, कोठों पर चढ़के, कमरों में खड़ी होके, सड़कों पर निकल के, बाज़ारों में चलके और गालियां भी वह फूहड़ जो बाजारी औरतें भी मुहँ से निकालते शर्मांती हैं, पर यह बेहया ढोल बजा और गला फाड़ फाड़ सुनाती हैं और फिर केवल समधियों को ही नहीं अपने पुरुषों के भी दादा पड़दादा बखानती हैं, और हित मित्र अड़ोसी पड़ोसी सबके मुहँ आती और वह उधम मचाती हैं, कि सुनने वाले कानों पर हाथ धरते हैं, पर इनको ज़रा सी लाज नहीं आती है॥

इसी तरह बुलावा देने जाने की यह धज निकाली है कि जवान जवान स्त्रियां सोलहों श्रृङ्गार करके झुंड की झुंड निकलतीं और बज़ारों में छुम छुम करती हँसती और इठलाती जाती हैं। ऐसी ही और बहुतसी कुचालें पड़ गई हैं, जो सब निर्लज्जता की खान, अधर्म की जड़ और अनेक उपाधियों की मूल हैं॥

सद्व्रत स्त्रियों को चाहिये कि इन निन्दित कामों के पास न जावें और न इनको कभी साधारण समझें। यह सब पति उतारने वाली बातें और सर्व दोषों की निदान हैं, और इन्हीं कुचालों को देख देख बच्चे भी सत्यानाश होते हैं॥

भाजी बधाई इत्यादि॥

यह काम भी नीति से विरुद्ध और ऐसे विस्तार के साथ किये जाते हैं, जिनमें रुपय भी लुटता, नाम भी धरा जाता, दुख और क्लेश भी होता और कोई अर्थ भी नहीं निकलता है। पक्वान् आदि पदार्थ भी ऐसे बनते जिसमें रुपये तो सैकड़ों हो उठते और हिस्से कुत्ते बिल्लियों को फेंके जाते हैं॥

दावंतों के वास्ते मिठाई भी मनो बनती और परोसी भी ढेर की ढेर जाती है, पर ऐसी जो कोई रुचि से खाता नहीं और खाता तो मांदा पडता है ॥

जो यह सब बंद करके गति की चीजें बनाई जांय, तो आधे से कम दाम भी लगे और स्वार्थ भी हो ॥

इसी तरह बरी और दाज में जो फैलावा होता है उसमें भी बहुत सा व्यर्थ रुपया फुकता है। जो यही सब बचा के वर और कन्या को कोई जायदाद लेदी जाय तो पुण्य भी हो और उनके काम भी आवे ॥

इसलिये:चाहिये कि जो निन्दित कर्म. खोटे व्यवहार, दूषित चाल और भौंडी रीते हैं सबको छोड, उचित और अनुचित विचार जातिमात्र के कुलीनों को दंडवत कर, वर वा कन्या को श्रेष्ठ कुलों में ढूंढ़, उनके गुण, स्वभाव और प्रकृति की अच्छी तरह से जांच और सब बातों में पूरा जोड़ देख, विधि पूर्वक उनका विवाह करो और जो कुछ बन पड़े अपनी सामर्थ्य अनुसार उनको देकर आशीर्वाद दो कि फूलें फलें और सुख से रहें ॥

वधू प्रवेश ।

पुत्र का विवाह अथवा दुरागमन कराके जब वधु को घर लावो उसका अच्छी तरह से सत्कार करो, बड़े प्यार से और मधुर वाणी निश्य बोलो, कभी कड़वी बात न कहो, अपनी पुत्री के समान मानो, प्रीति सहित कुल की रीति और घर के काम काज बतलावो, धरना, उठाना, आये गये का यथायोग्य शिष्टाचार करना सिखलावो, पढ़ी लिखी न हो तो हित से पढ़ावो,कोई काम उससे बिगड़ जाय तो ताने मिहने न दो, धीरे से समझावो, दया और प्रेम से उसके मन को अपने वश में करलो, वस्त्र आभूषण आदि से सदा प्रसन्न और सब भांति संतुष्ट रक्खो, अच्छी प्रकृति डालो, मधुर

स्वभाव बनावो, सती धर्म सिखावो, और छोटी हो तो जब तक पूरी युवा न हो जाय, गर्भाधान संस्कार वा सुहाग रात की रीति का विधान न करो, पुरुष के पास उठने बैठने से बचाये रहो, क्योंकि छोटी अवस्था में स्त्री और पुरुष का संभोग दूषित तो हुई है, ऋतु-मती होने से पहले प्रसंग करना महा पातक भी लिखा है ॥

देखो निर्णय सिंधु का प्रमाण

प्राग्रजो दर्शनात्पत्नीं नैयांगत्वा पतत्यधः ।
व्यर्थो कारेण शुक्रस्य ब्रह्महत्यामवाप्नुयात ॥

अर्थात् रजोदर्शन से पहिले स्त्री से भोग करने में ब्रह्महत्या का पाप होता और नरक भोगना पडता है ॥

ऐसाही भविष्य पुराण में भी कहा है कि

रजोदर्शनतः पूर्वं न स्त्रीसंसर्गमाचरेत् ।
संसर्गं यदि कुर्वीत नरके परिपच्यते ॥

अर्थ—रजोदर्शन से पूर्व स्त्री के साथ प्रसंग उचित नहीं, जो ऐसा करता है नरक में जाता है ॥

और अब तो सर्कार ने क़ानून बना दिया है कि चाहे स्त्री रजोधर्म को भी प्राप्त होजाय पर बारह साल से उसकी उमर एक दिन भी कम होगी और पुरुष प्रसंग करेगा, तो दश वर्ष कैद रहेगा और काले पानी भेजा जायगा, और इससे भी बढ़कर दुर्गति यह होगी कि स्त्री कचहरी में बुलाई और डाकर को दिखाई जायगी, मा बहिनों को गवाही भरनी पडेगी, सत्तर पीढ़ियों की नाक कटेगी, सारी प्रतिष्ठा मट्टी में मिलेगी, कुनबे में कोई भी मुहँ दिखाने योग्य न रह जायगा, घर भर को डूब मरना पड़ेगा इसलिये आवश्यक है कि इसकी बहुत बड़ी रोक रक्खो, जिसमें यह कोई आपदा सामने न आय, शरीर, धर्म, धन, और आबरू

किसी में वट्टा लगने न पाय, और आगे को बाल विवाह का कभी नाम भी न लो कच्ची अवस्था में बालकों का संबंध करना एक दम छोड़ दो ॥

मृत्यु कर्म ॥

जैसे विवाह आदि उत्सव में खोटी रीतियों का प्रचार हो रहा है, वैसेही मृत्यु कर्म में भी बहुत कुछ उन्माद किया जाता है, जो समय भय मानने और चेतने का है, उसमें ये उपद्रव होते हैं, कि कोई बूढ़ा मरता तो उसकी लाश बरात की नाई गाजे बाजे के साथ उठाते, चांदी सोने के फूल और रुपये पैसे लुटाते, संबंधी और नातेदार ठठोलियां करते, मुर्दे का विमान लूटते, कफ़न की धज्जियां नोचते और अपने और लड़को के गलों में बांधते हैं, स्त्रियां घरों में नाचती, गाती, समांग बनाती और फूहड़ बकती हैं, नाई मीरासी खिलत पाते, नाते गोते चुकते और मिठाई बटती है ॥

खत्री और सारस्वत ब्राह्मणों में बूढ़ा मरे या जवान, स्त्रियां अर्थी के पीछे पीछे जाती और घाटों पर शिर खोलके पीटती हैं नाते गाते बालियां तक चूड़ियां तोड़ती, साल भर शोक रखतीं लंघन करतीं और जिस तरह शीया मति की मुसल्मानियां मुहर्रम में जमा होकर सोज़ और नोहे पढ़ती और मातम करती हैं ये भी धाड़ की धाड़ खड़ी होतीं और बैन पढ़ पढ़ के अपना माथा और छाती कूटती हैं और घड़ी दो घड़ी यों पिटाई करके बैठ कर मुहँ पर पल्ला डालतीं और मुर्दे की प्रशंसा कर करके रोती हैं ॥

इस रोने पीटने की अनुरीति पूरी करके फिर आपस में गप्पे उड़ातीं और नित्य सांझ तक इसी प्रकार की बैठक, करतीं और कलकल मचाती हैं। घर के काम धन्धे चाहे पड़े रह जांय, स्यापे में

कोई नागा नहीं करती और बाजी की तो यह आदत पड़जाती है कि ईश्वर की कृपा से किसी साल कुशल रही और कहीं शतरंज न बिछी तो उसका जी घबराता और दिन काटे नहीं कटता है॥

ऐसी अनेक कुरीतियों से मुर्दे को भी दुर्गति की जाती है और अपना भी नाश॥

धर्म शास्त्र तो कहता है कि

"न वर्द्धयेदघाहानि,,

अर्थात् शोक के दिनों को न बढ़वो, यहां उसके विपरीत साल भर स्यापा रक्खा जाता है॥

"नाश्रुमा पातयेज्जातु,,

कोई आंसु भी न गिरावो

और भग्वद्गीता में भी समझाया है कि

जातस्यहि ध्रुवो मृत्यु ध्रुवं जन्म मृतस्यच।

तस्माद् परिहार्य्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि॥

अर्थ—जो जन्म लेता है अवश्यही मरता है और फिर जन्म भी पाता है इस लिये शोक करना न चाहिये।

यहां रोना आने के वास्ते दर्द भरी आवाज से वैन और नीहे पढ़ाये जाते हैं॥

शास्त्र की आज्ञा है कि

स्वयं च मण्डिता नित्यं परिमृष्ट परिच्छदा॥

अर्थात् सौभाग्यवती सर्वदा सुन्दर वस्त्र और आभूषण से भूषित रहा करे॥

और स्मृतियां हुकुम दे रही हैं कि विना शृंगार किये अपने स्वामी के सामने न जाय॥

ये उलटे शोकवती बनतीं, अपनी, चूड़ियां तोड़तीं, नथ उतरतीं

मैली चादर ओढ़तीं, विधवओं का सा रूप भरतीं और पति के जीते जी रंडापा रचती हैं।

मनुजी महाराज तो सुहागिन को उपवास करना मना करते और कहते हैं कि

पत्यो जीवति या स्त्री दुपोष्य व्रतचारिणी।
आयुष्यं हरते भर्तु नरकं अधिगच्छति॥

जो पति के जोते हुये उपवास करती वह अपन खाविंद की आयु हरती है, यह कुलक्षणी लंघन पर लंघन रखतीं और पति क्या बच्चों तक के मारने का उपाय करती हैं, फाके कर कर और छातियां कूट कूट के अपना दूध सुखातीं, गोद के बालक को रोगी और मरियल बनातीं, पेट के बच्चे को हानि पहुंचातीं, अपना भी स्वास्थ्य बिगाड़तीं और आगे की संतयि की वृद्धि में बाधा डालती हैं॥

फिर आप तो दो दो पहर स्यापे में बैठती और स्याने बच्चे गलियों में मारे फिरते और कुसंगत में पड़ के खराब जाते हैं।

इसके सिवा स्यापे जाने का यह फल भी मिलता है कि नित्य घर से बाहर निकलने में अनेक प्रकार का कलंक लगता, दस अच्छी तो चार बुरी का भी साथ होता, कुछ न कुछ कुसंग का भी असर पहुंचता और देखा देखी स्वभाव भी बदलता है और यह भी न सही तो असंभव है कि भाड़की भाड़ स्त्रियां एकत्र हों और आपस में कुछ तू तू मैं मैं न हो जाय॥

अब इन सब बातों को छोड़कर यह भी मान लिया जाय, कि कोई दोष उत्पन्न नहीं होता, तो स्यापे जाने वालियां कृपा करके यह तो बतलावें, कि जो स्त्री अपने पति वा पुत्र के शोक में हो उसको रुलाना, क्या ठीक है और क्या यह भी कोई नीति वा पुरुषों की बताई रीति है, कि इधर तो आप मृतक के गुण वर्णन करके उस विपत्ति

की मारी के दाह को भड़कावे, और उधर उसी के मुहँ पर ठट्ठे लगावें या कल कल मचावे, वह अभागी तो पुत्र के शोक में जलती हो, आप बिवाह की बातें करे और दाज फैलावे, और यह कौन सी बुद्धिमानी या कैसी करुणा है, कि उसकी तो दिन भर के बे अन्न जल रोने पीटने और रात सारी कराहते बीतने की थकावट उतरी नहीं घर बार अपना सहेजने नहीं पाई, मर्दों ने अभी रोटी तक नहीं खाई और आपने चादर उठाई और जा मौजूद हुई, और फिर जो कहीं उसको पहले से शिर मुहँ लपेटे और रोते नहीं पाया, तुरत उसका गुड्डा बनाया ॥

ज़रा तो इन अपने कुलक्षणों को सोचिये और जी में शर्माइये, बड़ों ने यह रीति इस वास्ते नहीं बांधी थी कि आप किसी के शोक को नित्य आ जा के बढ़ावें, उनका आशय केवल यह था कि, जब किसी पर ऐसी व्यथा पड़े, उसको जाके ढाढ़स दिलावो, न यह कि दाह को बढ़ावो और जलती आग को भड़कावो ॥

अपना भला चाहो तो इन निकृष्ट चालों को छोड़ो और दूषित स्यापे को उठावो केवल मौत के दिन जावो, मृतक के संबंधियों को धैर्य बँधावो और ईश्वर से प्रार्थना करो कि उनको सबर दे और उस की भूल चूक क्षमा करे ॥

———:0:———

दुर्गेशनन्दिनी—ऐतिहासिक और अति रोचक उपन्यास बङ्किम बाबू के मशहूर उपन्यास का अनुवाद मूल्य ॥)

मगेस्थनीज—भारत वर्ष के लगभग २३०० वर्ष के पुराने वृत्तांत जानने का शौक है तो इस यात्री के लिखे वृत्तांत को पढ़िये मूल्य ॥)

बुन्देलखण्ड केसरी—महाराज छत्रसाल का जीवन चरित्र दो भाग का मूल्य ।॥)

महात्मा मेज़नी—का जीवन चरित्र ला० लाजपतराय जी की लिखी पुस्तक का अनुवाद मूल्य ।)

प्राचीन भारतवर्ष की सभ्यता का इतिहास—सर रमेश चन्द्र दत्त लिखित पुस्तक (Ancient civilization of India) का अनुवाद। यह पुस्तक हिन्दी में इतिहास के अभाव को दूर कर रही है इसमें वैदिक काल से लेकर हिन्दुओं के समय का पूर्ण वृत्तांत है। चारों भाग का मूल्य ४) की भाग १)

फुटबाल का खेल—यदि आप लड़कों को खेल सिखलाना चाहते हैं या फुटबाल के नियमों को बतलाना चाहते हैं तो यह पुस्तक बच्चों को अवश्य दीजिये। मूल्य -)॥

महात्मा श्रीकृष्ण जी का जीवन चरित्र—यह पुस्तक ला० लाजपत राय जी की लिखी पुस्तक का अनुवाद है। इसमें ग्रंथकार ने प्रमाणों और युक्तियों द्वारा सिद्ध कर दिया है कि श्री कृष्ण जी राजनैतिक, नीति कुशल और सचरित्र थे मूल्य ॥)

बङ्गविजेता—यह उपन्यास सर रमेशचन्द्र दत्त लिखित पुस्तक का अनुवाद है बड़ा ही रोचक और शिक्षाप्रद है मूल्य ॥=)

माधोप्रसाद,

धर्मकूप, काशी।

Cover printed at Hitchintak Press, Ramghat, Benares City.